मैं नहीं माखन खायो

मैं नहीं माखन खायो

प्रेम जनमेजय

पचशील प्रकाशन, जयपुर

ISBN 81-7056 063 2

प्रकाशक पंचशील प्रकाशन
फिल्म कालोनी, जयपुर-302003

संस्करण प्रथम 1990

मूल्य तीस रुपये

मुद्रक जितेन्द्र प्रिंटर्स, शाहदरा दिल्ली 32

MAI NAHI MAKHAN KHAYO (Satires)
by Janmejay Rs 30 00

समर्पण

अपने व्यंग्यकार साथियों—
शंकर पुणतांबेकर, लतीफ घोंघी, हरीश नवल
ज्ञान चतुर्वेदी, अजनी चौहान, बालेंदुशेखर तिवारी,
प्रकाश पुरोहित, श्रीराम आयंगार विनोद
शंकर शुक्ल, सुदेशकांत, राजेशकुमार, यज्ञ शर्मा,
यशवंत व्यास।
और हम सबके प्रिय
स्वर्गीय लक्ष्मीकांत वैष्णव
के लिए।

अनुक्रम

आह दिल्ली ! वाह दिल्ली !

कहते हैं दिल्ली कई बार उजडी है, कई बार बसी है, बसी हुई दिल्ली को उजाडने के लिए लुटेरे बादशाह आते थे और दिल्ली को उजाड कर चले जाते थे। आजकल रूप बदल गया है। दिल्ली उजड नही रही है, दूसरो को उजाड रही हैं। बादशाह आजकल यही बस गये है। देश उजड रहा है और दिल्ली फल फूल रही है। केंद्र को मजबूत करने के नारे लगाए जाते है। केंद्र मजबूत हो रहा है। केंद्र के बादशाह मजबूत हो रहे हैं। मजबूत ही नही हो रहे है, मोटे-ताजे हो रहे है। देश को उजाडने की गतिशील पचवर्षीय योजनाए इसी दिल्ली मे बनती हैं। यह लुटेरापन दिल्ली की नस नस मे ब्लड कसर की तरह फैल गया है। उपभोक्ता और विक्रेता मे शिकार और शिकारी का सबध स्थापित हो गया है। लुटेरो के लिए राजधानी स्वर्ग बनी हुई है जिसमे रहने के लिए देवता भी तरसते हैं।

दिल्ली देश का ही केंद्र नही है, अन्य-अन्यो का केंद्र है, भ्रष्टाचार, अनतिक, बेईमानी, शोषण, हत्या, अन्याय आदि सब कुछ मिलेगा। माई-बाप यही तो सब कुछ फलता फूलता है यहा आपको अपने देश के कर्णधार भी मिलेंगे, जिनके कधो पर आपने पाच वर्षों के लिए अपने देश का भार सौंपा हुआ है, यह दीगर बात है कि उन कधो पर बन्दूकें रखी हुई हैं, जिनका मुह आपकी ओर है।

इस दिल्ली मे आपके वे सेवक भी रहते है जिन्हे आपने चुन कर देश-सेवा के लिए भेजा है। कभी आकर अपने सेवको के दर्शन करने का प्रयत्न तो कीजिए, लगेगा जैसे किसी किले मे घुसने का भीष्म-क्रम करना हो। और आपके महासेवक ऐसे किले मे छुप हैं जहा परिंदा भी पर नही मार सकता फिर आप क्या हु ! आप कितने महान हैं कि स्वय टूटी फूटी झोपडियो मे रहते हैं और आपके सेवक कई एकडो मे फैले महलो म रहते हैं। धन्य है आपका त्याग, धन्य है आपकी महानता और धन्य है आपकी शराफत !

यह नयी दिल्ली ही है श्रीमान ! जिसने दिल्ली को पुराना ही नहीं किया है, पूरे देश को बदबू और कूडे के ढेर मे बदल दिया है । जिसने अपने को नया बनाने के लिए अपने को इक्कीसवी सदी मे ले जाने के लिए सबको पुराना और घटिया माल बना दिया है । नया तभी नया होगा जब पुराना उसके बगल में होगा । पुराना जितना पुराना होगा, नया उतना ही नया लगेगा । इसलिए नये की निरतर यह कोशिश होती है कि पुराना खण्डहर हो जाए जिससे नये का तुलनात्मक सौंदय बना रहे ।

दिल्ली को हिंदुस्तान का दिल कहते हैं परन्तु यह दिल नये और पुराने मे बट गया है । पुराना दिल आज भी चादनी चौक, सदर-बाजार, पहाडगज और शाहदरा के गली कूचो मे धडकता है । नया दिल दिनोदिन बस फूलता जा रहा है, उसकी धडकन शायद उसको ही नही सुनाई देती है । जो कभी दिल्ली थी आजकल नयी और पुरानी दिल्ली है । नयी और पुरानी ही नही अब वह पूर्वी, पश्चिमी, उत्तरी और दक्षिणी दिल्ली हो गयी है । हर तरह की दिल्ली मिलगी आपको यहा माई बाप ! कसी चाहिए, अमीर गरीब, सुदर असुदर महल झोपडी सब मिलेगा यहा माई-बाप ! दक्षिणी दिल्ली तो रावण की लका हो गयी है । जहा स्मगलर हैं, काल गल हैं, भ्रष्ट अफसर हैं पैसा-ही पैसा है । दक्षिणी दिल्ली मे रहना 'स्टेटस सिंबल' बन गया है । एक कमरे का हजार रुपये किराया देने वाला अपने आपको नदन-कानन मे अनुभव करता है । चाहे खाने को दाने न हो, रहना दक्षिणी दिल्ली म है ।

दक्षिणी दिल्ली मे रहना सम्मानजनक है तो पूर्वी दिल्ली मे रहना गाली है । पूर्वी दिल्ली को ज्ञानी जन 'जमनापार' कहते हैं । जमनापार सुनते ही सभ्य सुसस्कृत लोगो की नाक पर रुमाल आ जाता है । "जमना-पार रहता हू" कहते ही व्यक्ति का अवमूल्यन हो जाता है । वह व्यक्ति आदमी नहीं रह जाता है बदबूदार गलियो और कूडे का ढेर बन जाता है । शाहदरा, सीलमपुर गाधी नगर, कृष्णा नगर आदि की मिली-जुली सरकार है यह जमनापार, यहा के रहनेवाले अपने को दिल्ली म नही समझते हैं । जैसे भारत म रहनेवाले भारत मे रहते हुए भी भारतीय नही समझते हैं ।)

जबकि वह रहते दिल्ली मे हैं। लालकिले के पीछे बहनेवाली यमुना नदी ही, विभाजक रेखा है। फिर भी यमुना पार वाले लोग चादनी चौक, 'कनॉट प्लेस या रेलवे स्टेशन की ओर रुख करते हैं तो कहते हैं—'दिल्ली जा रहे हैं'। दिल्ली म रहते हैं और दिल्ली जा रहे हैं, यह एक आध्यात्मिक चिंतन का प्रश्न हो सकता है। आप कीजिए, मैं जरा आगे बढता हू।

हमारे एक मित्र हैं रामफल, यमुनापार शाहदरा मे रहते हैं। अत्यधिक परिश्रम करके उन्होंने इजीनियरिंग पास की, इजीनियर बन, अच्छी नौकरी मिली। इच्छा हुई कि अच्छी पत्नी भी मिल जाए। अच्छी नौकरी, अच्छा वेतन तो उन्हें मिल ही रहा था परतु जमनापार रहते थे। इसलिए जहा भी अच्छे रिश्ते की बात चलती, सब कुछ तो ठीक रहता परतु जैसे ही लडकी-वालो को पता चलता कि लडका जमनापार रहता है सब ठप्प हो जाता। कॉन्वेंट मे पढी, पॉश इलाके मे रहनेवाली लडकी साफ मना कर देती—मैं जमना पार नही जाऊगी, बेचारे बहुत दुखी, बाप दादो का मकान भी नही छोड सकते हैं, वरना भाई सभाल लेगा और अच्छी पत्नी का मोह भी नही त्याग सकते हैं। छह साल से इसी दुविधा मे फसे हुए देश की जनसख्या को कम करने मे सहायता दे रहे हैं। जमनापार का यह योगदान इतिहास मे, चाहे तो लिखा जा सकता है।

अब तो यमुनापार इलाके के लिए चार पुल हो गये हैं पाचवा निर्माणाधीन है परतु एक जमाना था बेचारा एक पुल ही धोबी के गधे सा सारा बोझ ढोता था। शाहदरा के आसपास के क्षेत्रो से आनेवालो को 'दिल्ली' लाने ले जाने का सुकर्म आज भी यही गधा करता है। उधर पुल चार हुए तो जनसख्या भी बढी है। सुबह शाम इस पुल पर पैदल, रिक्शा, तागा, बैलगाडी, ठेला, स्कूटर, टैक्सी कार, ट्रक, बस आदि का वो रेला चलता है कि 'रगना' शब्द भी शरमा जाता है। पुल का मौखिक इतिहास बताता है कि इस पुल पर खडी टैक्सी ने अपने को प्रसूति गृह मे बदला है अनेक बच्चो का जन्म हुआ है, यहा खडी टैक्सियों में।

अंग्रेजो के जमाने के इस पुल का समय पूरा हो चुका है। यह खतरनाक

भी घोषित हो चुका है परतु हम अब भी इसे अग्रेजी और अग्रेजियत की तरह गले से लगाये हैं।

झोपडी डालने से पुलिस को रिश्वत देने के रेट तक जमनापार या दक्षिणी दिल्ली जैसे इलाको के हिसाब से तय होते हैं। दक्षिण दिल्ली म पुलिस का चाय पानी महगा है जमनापारवालो को इसम विशेष छूट मिलती है।

दिल्ली कितने ही क्षेत्रो मे बटी हो परतु विद्वान और ज्ञानीजन इसे दिल्ली और नयी दिल्ली के भेदो के रूप मे जानते हैं। नयी दिल्ली, नयी है, प्यारी है प्यारी है। क्या साफ सुथरी सडकें और लोग हैं! शाम के समय बने-ठने मर्द और बाल कटी महिलाए मार्किट मे चमचमाती हैं। सीक कबाब चाइनीज, पिज्जा, चिकन तदूरी आदि इर्द गिर्द सजी सवरी मक्खियो से महकाते सभ्य सुसस्कृत पश्चिमी सस्कृति के कणधार अपने का तरह-तरह स 'पोज' करते हैं। देवता भी देख कर पुकार उठते हैं कि प्रभु हम कलयुग मे अवतार देना तो यही देना! अप्सराओ स अब हमारा मन भर गया है। अन्दर मे दक्षिणी दिल्ली की भडकीली आत्माए चाहे कितनी भी खोखली हो परतु बाहर से महान आत्माए अपनी सज धज बिगडने नही देती हैं। कितनी महान हैं ये आत्माए जो बिकी हुई हैं।

परतु पुरानी दिल्ली तेरे पास क्या है? रिक्शे-तागे, छाबडिया और तग गली कूचो मे भडभडाती दिल्ली तेरे पास क्या है! जहा चलते हुए कधे एक-दूसरे से टकराते हैं फिर भी लोग 'ब्लडीफूल' या स्टुपिड' नही कहते हैं असभ्य हिंदी भाषा म पुकारते हैं। जहा आ कर लगता है कि हम गले सडे गरीब हिंदुस्तान मे रह रहे हैं। अग्रेजियत जब सारे देश ने नही छोडी है, तू क्यो छोड बैठी है, पुरानी दिल्ली! तेरी गलिया और कूचे क्यो धडकते हैं!

आप अगर राजधानी आ रहे हैं तो ध्यान से आइएगा, क्योकि सावधानी हटी दुर्घटना घटी का नियम राजधानी के चप्पे चप्पे पर लागू होता है। यहां सडक पर ही नही, जेबो पर भी दुर्घटना घटती हैं। राजधानी म प्रवेश

करते समय कुछ न्यूनतम गुण उसके पास होने चाहिए, यदि आपका शरीर ईमानदारी और नैतिकता की तरह सूख कर काटा हो गया है तो डी० टी० सी० की बसों में चढ़ने का साहस मत कीजिएगा वरना आपका हाथ व टांग या शरीर का कोई भी हिस्सा आप से अलविदा कह सकते हैं। यदि आपका शरीर भ्रष्टाचार की तरह फूल कर कुप्पा हो गया है तो इस 'कुप्प' को भी डी० टी० सी० की नजर से बचाइएगा वरना आप किसी दिन फुटबॉल की तरह सड़क पर लुढ़कते नजर आयेंगे।

यदि आपको आत्महत्या करनी है तो दिल्ली की सड़कों पर आ जाइए, स्कूटर चलाइए, साइकिल चलाइए, कोई-न कोई बस, ट्रक आपको नीचे दे ही देगा। दिल्ली की किसी 'रेड लाइट' पर खड़े होकर देखिए, वाहन पर बैठा हर व्यक्ति आपको फायर ब्रिगेडवाला लगेगा। हर व्यक्ति जैसे कहीं आग बुझाने जा रहा हो। या ऐसा लगता है वाहनों की कुर्सी प्रतियोगिता चल रही है, हर कोई एक-दूसरे को गिराने में व्यस्त है।

दिल्ली की सड़कों पर आपको लाल-बत्तियों का ढेर मिलेगा। कभी रामकृष्णपुरम से मूलचंद की ओर रिंग रोड पर चले जाइए 6 किलोमिटर में इस क्षेत्र में आपको दस लाल बत्तियों के दर्शन होंगे। आप चाहें तो इसे लाल बत्ती क्षेत्र कह सकते हैं, वैसे भी यह दक्षिण दिल्ली का इलाका है। लाल बत्ती क्षेत्र से इसका गहरा ताल्लुक है।

आपको दिल्ली में 'दरियागंज' मिलेगा, 'पहाड़गंज' मिलेगा परन्तु इन इलाकों में न तो कोई दरिया या पहाड़ है और न ही ये इलाके गंजों की फसल के लिए प्रसिद्ध हैं।

राजधानी में जो पहली बार आता है वह अपने आपको गंवार ही महसूस करता है, ये दीगर बात है कि कुछ दिन टिक जाने के बाद वह अच्छे-अच्छे को गंवार सिद्ध करने की योग्यता प्राप्त कर लेता है। पर कुछ गंवार ऐसे होते हैं जो महानगर की सभ्यता का पाठ नहीं पढ़ सकते हैं, अनपढ़ होते हैं और जिंदगी भर गंवार बने रहते हैं। रेलवे स्टेशन या बस अड्डे पर उतर कर देखिए स्कूटर वाले ऐसे गले मिलेंगे जैसे आपके भाई हों परन्तु आपको गंवार सिद्ध करने में ऐसा चमत्कार दिखायेंगे कि अच्छे-से-अच्छा जेबकतरा भी शरमा जायेगा। आप महसूस करेंगे इतना सच तो

रेल से दिल्ली आने में नहीं हुआ जितना दिल्ली पहुच कर किसी के घर पहुचने मे हो गया। मुझे लगता है जिन डाकुओ ने आत्म समर्पण किया है वो सभी स्कूटर चलानेवाले बन गए हैं।

खर, दिल्ली की यही खूबी है कि यहा आह भी निकलती है और वाह भी निकलती है। यहा सरकार उठती भी है, गिरती भी है। यहा बोफर्स है, यहा जनसेवक हैं। यहा भूख है यहा अमीरी है। कह सकते हैं जो दिल्ली मे है वह भारत मे है और जो दिल्ली मे नही है, वह कहीं भी नही है।

आतंकवादी चूहे

कालेज से घर पहुचा तो देखा पत्नी बहुत व्याकुल है। चाय पानी पूछने की जगह उसने मुझसे कहा, "तुम्हारे पास एक किताब थी न कुछ वो चूहों की मौत जैसी।"

मैं चिंतित कि घरेलू पत्रिकाए और 'सामाजिक नावेल' पढनेवाली मेरी पत्नी साहित्यिक कैसे हो गयी? उसे बदीउज्जमा के प्रतीकात्मक व्यग्य उपन्यास 'एक चूहे की मौत' म कैसे रुचि जाग गयी?

मैंने कहा, "थोडा दम ले लू, बहुत उमस है, यह अच्छा है कि तुम मे साहित्यिक उपन्यास पढने की रुचि जाग रही है "

"उपन्यास! उपन्यास मे चूहो को मारने के तरीके दिए हुए हैं क्या?" पत्नी के चौंकते हुए कहा।

मैंने चौंकते हुए कहा, "चूहो को मारने के तरीके! तुम्हे चूहो को मारनेवाली किताब लगी वह? हद है "

"डाटते क्यो हो? मुझे क्या पता, कौन सी किताब है, ढेरो किताबें जमा कर रखी हैं तुमने कहने को, पर काम की कोई किताब नही है तुम्हारे पास। न स्वेटर की डिजाइन की, न पकवान बनाने की, चूहो को मारने तक की किताब नही है तुम्हारे पास।"

"पर तुम्हें चूहो को मारने की क्या आवश्यकता पड गयी?" मैंने पूछा।

"तुम्हें तो कोई जरूरत नही है न! मेरी नयी साडी कुतर दी आज उन्होंने। अभी किसी को पहन कर भी नही दिखाई है। तुम्हे तो घर का कुछ देखना नही होता है न! मैं ही बस, घर मे खटकती रहू। कृष्णलाल जी को देखो, घर का कितना काम करते हैं आजकल। सुबह का खाना वो ही बनाते हैं और शर्मा जी घर के सारे कपडे अपने आप धोते हैं, प्रेस हैं। देखो, तुम भी इन चूहो का कुछ करो। मैं तग आ गयी इनसे। घर

चौपट कर के रख दिया है। रसोई मे काम करो तो छोटी छोटी चुहिया पैरो के ऊपर नीचे दौडती हैं "उई मा " उसी समय एक चुहिया पत्नी के पाव के ऊपर से निकल गयी।

"देखा तुमने! अब चूहे तो ऐसे घूमते हैं, जैसे घर से हमे निकाल कर ही दम लेंगे। इन्हे नही रोकोगे तो सारे घर म बिल ही बिल नजर आयेंगे, पत्नी का चेहरा चुहिया आतक से पीडित था।

"इतनी छोटी छोटी चुहियो से तुम घबरा रही हो ?" मैंने चुटकी लेते हुए कहा।

"छोटे! छोटे लगनेवाले ही खोटे होते हैं। छिपा शत्रु बहुत खतरनाक होता है। पता नही किस बिल से निकलते हैं, नुकसान करके चले जाते हैं।"

"चूहेदानी क्यो नही लगाती हो ?" मैंने कहा।

"चूहेदानी! बडे चालाक हो गए हैं, पता नही कैसे चूहेदानी मे से रोटी निकाल कर ले जाते हैं। इन्हें तो अब खत्म करना होगा। वरना सारे घर का सत्यानाश करके रख देंगे।" पत्नी ने अपनी नीति की घोषणा की।

"इन्हें मारोगी, यह तो तुम्हारे गणेश जी की सवारी हैं ?" मैंने पत्नी की धार्मिक भावना को उभारा।

"तो शकर जी गले मे साप पहनते हैं, तो मैं घर मे साप पालना शुरू कर दू! बडे लोगो के सेवक ऐसे ही होते हैं, उन्हें अपने स्वामी की शह मिली होती है। स्वामी की इमेज की आड मे जो कुछ करते हैं, उसका उनके स्वामी को भी पता नही होता है।"

पत्नी ने बडी समझदारी की बात कह दी थी। 'बडे लोग' अकसर 'छोटे काम' अपने आसपास घिरे 'छोटे लोगो से ही करवाते हैं। उनसे उनकी 'बडी छवि' भी बनती है और आर्थिक आधार भी सुदृढ होता है।

घर से बाहर निकल कर देखा तो पता चला कि पत्नी ही नही सारा मोहल्ला चूहो से आतंकित है। सिन्हा जी और तिवारी जी चूहेदानी लिए जा रहे थे। मुझे देखते ही तिवारी जी बोले, "शिकार छोडने जा रहे हैं, बडी मुश्किल मे फसा है। देखिए खा-खा कर कितना मोटा हो गया है। आप तो जानते ही हैं ईश्वर की कृपा से हमारे यहा खाने पीने मे खुला खर्च

होना है। देशी घी खा कर चूहे मोटे नही होंगे तो क्या होगा!" यह कह कर उन्होंने बड़े गर्व से चूहेदानी मेरे मुंह के आगे टिका दी, "देखिए, देखिए मुफ्त की खा कर कितना मोटा हो गया है!"

"हां, बहुत मोटा है।" मैंने प्रमाणपत्र दिया।

"सिन्हा साहब की चूहेदानी मे बहुत छोटा है, चुहिया है, चुहिया। दिखाइए सिन्हा साहब।"

सिन्हा जी ने हीनभावना से ग्रस्त हो कर गर्दन लटका ली।

मैंने कहा, "पर आप इन्हें ले कहां जा रहे हैं?"

"दूर छोड़ने जा रहे हैं जी, बड़ा तंग कर रखा है इन्होंने। अभी मैं हफ्ते पहले ही काजू, बादाम और किशमिश लाया था। सबका सत्यानाश कर दिया इन्होंने।" तिवारी जी ने फिर अपने चूहो का 'स्टेटस' बताया।

"मेरी भी मेरी भी एक इंपोर्टेड पेंट का सत्यानाश कर दिया इन्होंने।" सिन्हा जी ने अपने चूहो का स्टेटस बढ़ाया।

"इंपोर्टेड पेंटें तो हमारी कई खा गए। बड़ा दुखी कर रखा है भाईजान इन्होंने।" तिवारी जी ने फंसे चूहे की ओर घूरते हुए कहा। लग रहा था कि तिवारी जी शाकाहारी न होते तो शायद कच्चा ही चबा जाते।

"एक बार आपने इन्हें पकड़ लिया है, तो इन्हें छोड़ते क्यों हैं? यह अपनी आदत से बाज तो आयेंगे नही, फिर उत्पात करेंगे।" मैंने अपनी जिज्ञासा रखी।

"फिर क्या करें?" सिन्हा जी की आंखो मे रहस्य जागा।

"मार दीजिए?"

"नही जी, हत्या नही। जीव हत्या हम नही कर सकते।" तिवारी जी ने अहिंसा का श्लोक पढ़ा।

"चाहे जीव आपकी हत्या कर दे।"

"कोई नही, जब अपनी आनी है आयेगी। ऊपर वाला सब देख रहा है। वही कुछ करेगा।" तिवारी जी ने धार्मिक होते हुए कहा।

दोनो चूहे छोड़ने चल दिए। तभी मैंने देखा कृष्णलाल जी बंदूक पकड़े अपनी बालकनी मे आ गये। मुझे देखते ही बोले, "ऊपर आओ, एक बढ़िया चीज दिखाएं।"

बंदूक के आगे बड़े-बड़ों के छक्के छूट जाते हैं और मैं तो बेचारा मास्टर हूं। मन ने सोचा कहीं करतल-वतल कर मैं तो नहीं बैठे हैं! मन ने कहा, वैसे घबड़ाने की क्या आवश्यकता है, कृष्णलाल जी अच्छे पड़ोसी और मित्र हैं परन्तु अनुभव ने बताया कि अपन साग ही गोली चला देते हैं। इसलिए मैंने नीचे से पूछा, 'क्या हो रहा है, इस बंदूक का?"

"चूहे मार रहा हूं, चूहे तीन मार चुका हूं। कम्बख्तों ने बहुत दुखी कर रखा है। पिता जी की बन्दूक है यह। एन० सी० सी० की ट्रेनिंग काम आ रही है हा हा हा आप भी लगाओ निशाना, एक-दो आप भी मारो। हा हा हा ' कृष्णलाल जी हंसते हैं तो लगता था जैसे दावत के लिए बुला रहे हों।

"नहीं जी बस, फिर कभी। जरा काम है।" मैंने पीछा छुड़ाने के लिए कहा।

"क्यों, सब्जी बनानी है या बर्तन साफ करने हैं? हा हा हा "

अब मुझे लगा सारा मोहल्ला हंस रहा है।

मैं झेंपते हुए घर के अन्दर घुस गया। घर में घुसते ही पत्नी बोली, "तुम छर्रेवाली बन्दूक के चक्कर में मत पड़ना, बच्चों का घर है।"

इधर चूहों पर मैंने अनुभव के आधार पर काफी खोज कर ली है। खाने के मामले में चूहों में भी शाकाहारी और मांसाहारी पाए जाते हैं। कुछ घर लूटते हैं, कुछ आदमी खाते हैं। चूहे पढ़े लिखे भी होते हैं। एक साहब के चूहे उनकी अर्थशास्त्र की पुस्तक ही कुतरते हैं, बेकार की हिंदी किताबों को हाथ तक नहीं लगाते। चूहों का भी संगठन है। जो घर ज्यादा तंग करता है, वहां सब मिल कर हमला करते हैं। यह छुप कर हमला करने में अधिक विश्वास रखते हैं। यह धीरे धीरे घर को खोखला करते हैं। इन्हें पकड़ने के लिए चूहेदानी की नहीं, खत्म करने के लिए कृष्णलाल जी की बन्दूक की जरूरत है।

उसे चौंकाना चाहते थे। सुदामा न द्वारका मे श्रीकृष्ण के महल के पास पहुचकर देखा कि वहा आदमी कम सैनिक अधिक थे। सब सैनिक आधुनिक हथियारो से लैस थे। और गिद्ध सी दृष्टि से इधर उधर देख रहे थे।

सुदामा न एक सैनिक से पूछा, 'क्यो भाई, क्या युद्ध छिड गया है जो इतन सैनिक हथियारो से लैस होकर घूम रह हैं ?

'नही, हम सब महाराज श्रीकृष्ण के अगरक्षक हैं। तुम कौन हो, यहा कैसे घूम रहे हो ?' एक सैनिक बोला।

मुझे श्रीकृष्ण से मिलना है। मैं उनसे होली खेलना चाहता हू।' सुदामा ने भोलेपन से कहा।

'होली खेलने ! लगता है व्रज के गोपाल हो। तुम्हें तो आगरा जाना चाहिए यहा क्या करने आ गए। होली खेलेंगे हू यहा परिंदा भी होली खेलने नही आ सकता, तुम किस खेत की गाजर हो। होली खेलने के लिए समय लिया हुआ है। क्या ?'

'होली खेलने के लिए समय ? सुदामा ने साश्चय पूछा।

हा बिना आज्ञा के महल के अदर जाना तो क्या, तुम उस ओर देख भी नही सकते हो।' सैनिक बोला।

पर कृष्ण तो हमारी झोपडियो म घुसते हुए हमसे कोई समय नही लेते हैं वे तो धडधडाते हुए किसी की झोपडी म घुस जाते हैं, वह भी अकेले नही। जब कृष्ण हमारे झोपडे मे बिना समय लिए घुस सकते हैं तो हम क्या नही उनके महल मे घुस सकते सुदामा ने थोडा क्रोध से प्रश्न किया।

मैं बताता हू क्यो। क्योंकि श्रीकृष्ण राजा हैं और तुम प्रजा हो। प्रजा का महल की ओर बढने का अथ होता है। विद्रोह और राजा का झोपडी म जाने का अथ होना है। जनसेवा। वह राजा होने के अतिरिक्त जनता के सेवक भी हैं। तुम क्या हो, केवल प्रजा। श्रीकृष्ण महाराज झोपडी म तुम्हारा दुख-दद जानने जाते ह, होली खेलने नहीं आते। सैनिक बोला।

पर जनता भी तो अपना दुख-दद बताने आ सकती है और फिर मैं तो केवल होली खेलने आया हू। अरे भैया थोडी सी होली ही तो खेलनी है गुलाल का टीका लगाकर जल्दी आ जाऊगा।'

यह सुनकर सैनिक ने बहुत जोरो से अट्टहास किया, 'हा हा हा जल्दी लौट आओगे। यहा से अदर जाना और बाहर आना, दोनो तुम्हारी इच्छा पर निभर नही करते। जानते हो, श्रीकृष्ण के महल तक पहुचने के लिए दस तरह की तलाशिया होगी। तुम्हारे वस्त्र उतारे जाएगे तुम्हारे द्वारा लाए गए गुलाल की वैज्ञानिक जाच होगी। हथियारबद सनिको के बीच तुम्हे ले जाया जाएगा। इस सबमे एक मास भी लग सकता है।'

सुदामा आश्चर्य से अपने सहपाठी की सुरक्षा व्यवस्था का पाठ पढ रहे थे। उन्होंने कहा, 'पर भइया, होली तो मुक्त त्योहार है। होली म कोई छोटा बडा तो होता नही। हमने तो कृष्ण की यही छवि सुनी है कि वे गरीबो मे और अपने मे कोई अतर नही समझते हैं। सबको बराबर मानते हैं।'

'हे भोले ब्राह्मण, मानने से क्या होता है? झोपडी मे दो क्षण के लिए घुसना और पूरा जीवन उसमे बिताना, क्या बराबर है? तुम जीवन के गणित को नही जानते अच्छा यही है कि तुम अपनी औकात पहचानो और मुझे अपना कतव्य करने दो।'

औकात की बात सुनते ही सुदामा को गहरा सदमा पहुचा। वे जोर जोर से चिल्लाने लगा, 'इसका मतलब जो प्रचार हो रहा है वह धोखा है। कृष्ण की साफ-सुथरी छवि भ्रम है। वह गरीबो के दुख दद जानने नहीं, अपनी छवि सुधारने के लिए झोपडियो मे जाते हैं '

सुदामा चिल्ला चिल्लाकर बोल रहे थे कि वहा स श्रीकृष्ण के प्रचार मत्री का रथ निकला। उन्होने ये शब्द सुने तो रथ एकदम रोक दिया। अगर ये शब्द श्रीकृष्ण महाराज के कानो मे पड गए तो वह मत्री क्या, उनका सेवक भी नही रहेगा। उन्होने सुदामा से कारण जाना। सारी बात सुनने के बाद उन्होने तत्काल उस सैनिक का निलबित कर दिया और उसकी जगह एक गूगे सनिक को खडा कर दिया।

प्रचार मत्री ने सुदामा को शीतल पय पिलाया। श्रीकृष्ण के हस्ताक्षर युक्त अनेक चित्र उसे दिए। इसके पश्चात वे बोले, 'आप गरीबो से मिलने को भगवान हर समय उत्सुक रहते है। आप तो जानते ही हैं कितनी दूर-

दूर गावों मे जाते हैं, राजा होकर झोपडी मे घुसते हैं, वहा का भोजन खाते हैं। परन्तु राजा होने के कारण उनके कितने कर्तव्य हैं। हर समय गरीबों की तो नहीं सोच सकते हैं। आप भगवान श्रीकृष्ण से होली खेलना चाहते हैं मैं प्रबंध करा देता हू, परन्तु सोचिए कि क्या प्रजा का राजा के प्रति कोई कर्तव्य नहीं है? क्या हम अपने राजा को एक दो दिन का एकात नहीं दे सकते हैं?

'क्यो नही।' सुदामा ने कहा।

तो फिर मेरा आपसे अनुरोध है कि भगवान से फिर कभी होली खेल लीजिएगा। उनके होली खेलते चित्र चाहिए तो मैं दे दूगा। प्रतीक्षा कीजिए, क्या पता किसी होली को भगवान आपकी झोपडी मे स्वय दर्शन दे दें। आप समझ गए न।'

सुदामा अब तक बहुत कुछ समझ गए थे।

लागा चुनरी में दाग

कुछ लोगो की चुनरी में दाग लग जाए तो उन लोगो का सारा जीवन इस दाग को मिटाने मे ही व्यतीत हो जाता है। बेचारे प्रायश्चित के आंसुओ से उसे धोते रहते हैं और गा गाकर लोगो को इस दाग के बारे मे जानकारी भी देते रहते हैं। उनकी मूल चिंता 'पी' के पास बेदाग जाने की होती है।

कुछ लोगो की मूल चिंता 'कुरसी' के पास जाने की होती है। इनमे से कुछ की चुनरी दागो से भरपूर होती है। परन्तु ये 'चुनरी' के दागो को इस सफाई से छिपाकर रखते हैं कि रॉ या सी० बी० आई० की आखें भी वहा पहुच नही पाती हैं। ऐसे लोग दाग लग जाने पर चुनरी को न तो प्रायश्चित के आंसुओ मे धोते हैं और न गली गली दाग का विज्ञापन करते हैं। विज्ञापन का काम अखबार वाले करते हैं। ये बस बेशर्मी से मुसकराते भर रहते हैं।

प्रजातंत्र में किसी भी विवाद का निर्णय बहुमत के आधार पर किया जाता है। बहुमत ने 'गधे' को 'घोडा' कह दिया तो उसे घोडा ही मानना पडता है। विधानसभा ने कह दिया कि यह उपमुख्यमंत्री है तो उसे उपमुख्यमंत्री मानना ही पडेगा। प्रजातंत्र के इस महान गुण का आश्रय लेकर महान क्रांतिकारी, समाजसेवी एव देशसेवक चुनरी के दाग की सौदेबाजी करने से नही चूकते हैं।

वे हवाई जहाज से उतरे तो पत्रकारो ने कहा, "आपकी चुनरी मे भयंकर दाग लग गया है।"

"जानते हैं मेरे पीछे कितने एम० एल० ए० हैं। वे सब विधानसभा मे सिद्ध कर देंगे कि मैं निर्दोष हू।'

कितना आसान तरीका है स्वय को निर्दोष सिद्ध कराने का। आपके पास पैसा है, सभा की ताकत है तो आप नौ सौ क्या नौ करोड चूहे खाकर

भी हज कर सकते हैं, विधानसभा आपकी जेब में है।

परन्तु एक गड़बड़ हो गयी, आम चुनाव करीब आ गए। पार्टी को अपनी 'छवि' बनानी है। उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। यह तो सरासर नाइंसाफी है जनसेवक के प्रति किया गया अन्याय है। बेचारे उपमुख्यमंत्री बनकर 'देश सेवा' कर रहे थे, उनसे यह अवसर छीन लिया गया। प्रजातंत्र में बिना मंत्री बने देश सेवा नहीं की जा सकती। यह दीगर बात है कि जब उन्हें मंत्री बनाया गया था तो उनकी मंत्री बनने की इच्छा नहीं थी, जनता के लिए बने थे वो। मंत्री क्या प्रधानमंत्री तक को यह जनता जबरदस्ती कुर्सी पर बैठा देती है और कहती है—आ बैल मुझे मार।

किसी देशसेवक से उसकी कुर्सी छिन जाना उसके जीवन की बड़ी दुर्घटना और असंतुष्टों की विजयदशमी होती है। बेचारे देशसेवक का तो जीव ही कुर्सी में होता है, बिना जीव के शरीर करता ? निष्क्रिय, बेजान, निरर्थक और कुर्सी विहीन शरीर का कोई क्या करे ?

सोचा, बेचारे देशसेवक को बड़ा सदमा पहुंचा है, चलूं सहानुभूति ही प्रकट कर आऊं। वैसे सहानुभूति प्रकट करते समय हमारा उद्देश्य दूसरे को नंगा और बेचारा देखकर आनन्द प्राप्त करना होता है। सहानुभूति प्रकट करने के माध्यम से अक्सर लोग मनोरंजन करने जाते हैं।

'बड़ा बुरा हुआ आपके साथ।" मैंने सहानुभूतिपूर्वक कहा।

' मैं एक एक को देख लूंगा, मुझे सब पता है, असंतुष्ट नहीं चाहते हैं मैं उपमुख्यमंत्री बना रहूं जनता की सेवा करता रहूं। मैं जनता का सेवक हूं मरते दम तक जनता की सेवा करूंगा। मुझे फंसाया गया है।" उनकी आवाज में अतुले का दर्द था। यह दर्द कुर्सी जाने के बाद उठता है।

इसका मतलब अखबारों में जो आपके बारे में छपा है "

"वो सब गलत है सब गलत है मेरा चरित्र हनन किया जा रहा है।'

' तो त्यागपत्र आपके हाईकमान के कहने पर दिया है।"

' नहीं अपनी मर्जी से दिया है।"

जब आपने कुछ किया ही नहीं तो आपने त्यागपत्र क्यों दे दिया ?"

' अपनी मर्जी से दिया ' उनके अंदर से तोता बोला।

"सुना है आपके कारण पार्टी की छवि धूमिल हो रही थी ।"

"पार्टी की छवि, कैसी छवि अ ? जो मुझ पर अगुली उठा रहे हैं, इन्हें आप दूध का धुला समझते हैं । पार्टी को क्या चाहिए वोट एम०एल० ए०, एम० पी० । छवि से क्या मिलेगा ? हमारे पास कम एम० एल० ए० नही हैं ।"

"सुना है हाईकमान आपकी हरकतो से नाराज है ।"

"नही, बिल्कुल नही । मैं आखिरी दम तक साथ हू । (चाहे वो साथ न हो) मुझे कुर्सी का मोह नही है । (झूठ बोलते हुए उनकी जुबान लड-खडा रही थी ।) मैं अपनी नेता को मुश्किल मे नही डालना चाहता हू । मैंने त्यागपत्र दे दिया है अपनी मर्जी से । मैंने कुछ नही किया फिर भी त्यागपत्र दे दिया है । आप सोच सकते हैं कोई उपमुख्यमत्री ऐसा नीच काम करेगा ।" वे बोलते हुए 'उत्तेजित' हो गए थे ।

"पर आपने भविष्य मे कभी भी शराब न पीने की सौगध खायी है ।"

वो हकबका गए । उन्होने बगलें झाकी, तो उसमे से शराब की गध आई । वे लडखडा गए । "हा खायी है, शराब न पीने की कसम । अखबार वालो के सामने खायी है इन अखबार वालो को मसाला चाहिए न अब आप कहिए किसी को चोर, डाकू या हत्यारा कहने से पहले उसे न्याय-लय मे सिद्ध किया जाता है चोर, डाकू और हत्यारे हम उपमुख्यमत्री क्या हम चोर, डाकू और हत्यारे से भी गए बीते हैं अब वो जो कसम है एक बात मैं कह दू कि मैं पूरी तरह से साथ हू अखबार वाले तो ये असतुष्ट मैंने त्यागपत्र अपनी मर्जी से दिया है " वो हडबडा गए थे, उनका जीव कुर्सी मे था, वो छटपटा रहे थे ।

घर मे इक्कीसवी सदी

कालेज से पढ़ाकर घर लौटा तो घर मे घुसने से पहले लगा कि जैसे किसी दूसरे के घर मे घुस रहा हू, एक बार दोबारा अपनी फ्लैट का नम्बर पढ़ा, यह मेरा ही घर था। जैसे मथुरा वाले श्रीकृष्ण के पास से लौटकर अपनी झोपड़ी के स्थान पर महल खड़ा देखकर सुदामा को आश्चर्य हुआ था, वैसा ही आश्चर्य मुझे भी हुआ। परन्तु न तो मैं सुदामा की तरह गरीब हू और न ही मैं मथुरा तो क्या शाहदरा वाले श्रीकृष्ण के पास गया था। फिर मेरे फ्लैट मे यह परिवर्तन कैसे हुआ ? नया सोफा, रगीन टी० वी०, डाइनिंग टेबल, झाड फानूस, लगा जैसे किसी फाईव-स्टार होटल के कमरे म पहुच गया हू पाच घटे मे इतना बडा परिवर्तन।

मैंने अपनी घर मे घुसने के लिए घटी बजाई और आश्चर्य चकित उस जादूगर के बाहर आने की प्रतीक्षा करने लगा जिसने यह चमत्कार किया था। तभी पत्नी के सुमधुर-स्वर ने मेरे आश्चर्य को तोडा, "अरे आप बाहर क्यो खडे हैं, अदर आओ न।"

मैंने पत्नी की ओर देखा वह पहचानी नही जा रही थी। लग रहा था जैसे कोई ब्यूटी पारलर मेरे सामने खडा हो।

मैंने पूछा, "यह सब क्या है ?"

"तुम अदर तो आओ, सब बताती हू," आज वह पत्नी की तरह नहीं बोल रही थी अपितु चिड़िया की तरह चहक रही थी।

मैं अदर घुमा तो डरत डरत नये सोफे पर बैठा। बैठने म तकलीफ हुई "यह कैसा सोफा है बिल्कुल आरामदायक नही है।

"तुम्हें तो कोई भी नयी चीज अच्छी नहीं लगती है, पन्द्रह साल बाद ऐस ही सोफे बनेंगे, मैंने अभी से बनवा लिया है," पत्नी ने समझाया।

"पर यह चक्कर क्या है ?" मैंने कमरे मे अपनी अजनबी निगाहें घुमाते हुए पूछा।

"चक्कर ! तुम्हारे चक्कर में ही तो सारा घर कबाड़ बना हुआ था। कोई ढंग की चीज दिखाई ही नहीं देती थी। लगता था जैसे बाबा आदम के जमाने में रह रहे हैं। पड़ोस में सभी लोगों के घर देखे हैं, देखकर लगता है जैसे आज के जमाने में जी रहे हैं। और एक हमारा घर—कबाड़ी की दूकान लगता था। तुम तो चाहते नहीं घर सुंदर दिखे, आधुनिक बने, तुम्हें तो अपनी मास्टरी से मतलब है, लेक्चर झाड़ दिया, हो गया काम। घर भी अपनी तरह बना रखा था।" पत्नी मुझे डांटने के स्वर में आ गयी थी।

'भाग्यवान कौन नहीं चाहता है कि उसका घर अच्छा लगे। पर घर में खाने को न हो और हम सेंट लगाते फिरें क्या अच्छी बात है ! जितनी चादर हो उतने ही पांव पसारने चाहिए न," मैंने मास्टरी-मुद्रा में कहा।

रहने दो अपनी मास्टरों वाली लेक्चरबाजी। चादर और पांव पसारने की बातें पुरानी हो गयी हैं, अब तो पांव पसारो और चादर बड़ी करो।"

'वाह चादर ही फट जाए और हम नंगे दिखाई देने लगें।" मैंने जिज्ञासा प्रकट की।

"तुमसे तो बहस बेकार है, इस घर में मेरा भी कोई हक है कि नहीं। आखिर घर चलाने की जिम्मेदारी किसकी है ? मेरी न कुछ दिन मैं अपनी तरह से घर चलाना चाहती हूं, चला नहीं सकती क्या ?" पत्नी नाराज हो गयी।

'शादी के बाद से तुम ही तो चला रही हो। सारा घर ही तुमने बनाया है, अब इस घर में तुम्हें खराबी नजर आ रही है।'

"मेरा एक सपना है उसे मैं पूरा करूंगी, सब कुछ नये तरीके से होगा।' पत्नी की आंखों में सपना तरने लगा। और मेरी आंखों में रेगिस्तान की रेत।

—"पर इस सबके लिए पैसा कहां से आएगा, देवी ? तनखाह तो उतनी है, एक आध डी० ए० और मिल जाएगा।"

—'फिलहाल तो उधार से काम चलाएंगे।'

'उधार ! उधार बड़ी बुरी दलदल है, राजनीति से भी बड़ी दलदल।"

—"हू, सारा देश उधार पर चल रहा, तुम्हारा मतलब है देश कर्ज मे फसा है। हम तो वैसे भी धीरे धीरे बचत करके सब चुका देंगे।" पत्नी ने अपनी पचवर्षीय योजना की घोषणा की।

—"कैसे ?"

—"घर की प्रगति के लिए हम सबको कुछ न कुछ कुर्बानी करनी होगी। कर्ज उठाना होगा, तुम्हे अपने सब फालतू खर्चे बद करने होगे।'

—'जैसे ?"

—"फिल्म देखकर आखें खराब करना और पान खाकर पर्श थूकना।"

—"पान तो वैसे ही बहुत कम खा रहा हू, पर तुम जो रोज ढरो लिपिस्टिक खा जाती हो, वह ?" मैंने आखें मटकाइ।

—"वह लिपिस्टिक जरूरी है, सुदरता के लिए। तुम तो चाहते नहीं हो कि मैं सुदर दिखाई दू, लाग तुम्हारी पत्नी को सदर कहे खुशी नही मिलेगी ?" पत्नी ने चेहरा मटकाया।

— मुझे तो पान खाने स भी खुशी मिलती है। पान पर खच ही कितना होता है ? तुम जो विदेशी लिपिस्टिकें खाती हो उनका दसवा हिस्सा भी नही होता होगा। हम तो देशी पान चाहिए, तुम्हें लिपिस्टिक भी विदेशी चाहिए, देख रहा हू आजकल विदेशी चीजें तुम्हें बहुत पसन्द आन लगी हैं। विदेशी कार विदशी टी० वी०, विदेशी सूट, विदेशी कबल, तुम तो विदेशमय होती जा रही हो।

—' तुम तो दकियानूस हो।'

— और तुम ? तुम भी तो गाधीवादी हो जब भी कोई सकट होता है— गाधी ! गाधी !' पुकारने लगती हो, गाधी जी ने तो स्वदेश पर बल दिया था, विदेशी की होली जलाई थी।

— 'उन परिस्थितियो म वह आवश्यक था। तब हम गुलाम थे और आजाद होना चाहते थ। अब तो हम पूरी तरह स आजाद हैं'

'और अधूरी तरह स गुलाम होना चाहते हैं। अब नई तरह की गुलामी हम पसन्द है, इक्कीसवी सदी की, क्यों ?'

—' तुमस तो बहस बकार है। मैंन देख लिया मेरा इस घर म कोई

अधिकार नहीं, मैं नाम की घर की रानी हूँ, मेरी मम्मी के घर में "

'मम्मी' मेरी पत्नी की आखिरी और कारगर हथियार है। वह रोती है और 'मम्मी' के घर की प्रगमा में पुराण बाचने लगती है। मैं भावुक होकर हथियार डाल देता हूँ भावुकता भारतीय गुण जो है। सात खून करने वाला भी रो दे तो हमारा दिल पसीज जाता है, इस बार भी मैंने हथियार डालने की स्वर्णिम परम्परा निभाते हुए कहा, "अच्छा बाबा ! रोओ मत, और यह बताओ कि बचत के लिए और क्या कटौती करनी होगी ?"

—"अब तुम कॉलिज स्कूटर की जगह बस में जाया करोगे।"

—"बस में ! क्यों ?"

—"पट्रोल बचाओ, खर्चा कम करो।"

—"पर बस भी तो बहुत महगी हो गयी है।"

—"स्कूटर के खर्च से बहुत कम महगी है। जब बहुत जरूरी हो तभी स्कूटर पर जाना।"

—"चलो यह अक्लमदी की बात कही तुमने, हम लोग कार बेच देते हैं, वह भी बहुत पट्रोल खाती है। खाती क्या हो पीती है।"

—"कार बेच देते हैं ! मुझे और बच्चा को जाना होगा तो किस पर जायेंगे, तुम्हारे खटारा स्कूटर पर ?"

—"बस में जायेंगे।" मैंने शिखर वार्ता में समझौता रखा।

—'हमसे बस में नहीं जाया जाएगा। बस में कितने गदे गंद लोग बैठे होते हैं। बस में सुरक्षा भी क्या है ?"

—"कार में मेरे स्कूटर से चार गुणा पैट्रोल खर्च होता है। मैं जब स्कूटर में भी जाने लायक नहीं रहू और तुम कार में मजे करो, भई वाह !"

—"कार में तो हम जरूरी काम से जाते हैं।"

—"जरूरी काम ? मायके हर हफ्ते जाना जरूरी है ? सहेलियों के साथ बिंदी शॉपिंग के लिए जाना जरूरी है ? सहेलियों को लादकर सडक पर 'सडक गश्ती' करना जरूरी काम है ? तुम तो सब्जी भी कार पर खरीद कर लाती हो, क्यों ?"

—"देखो तुमने, फिर बहस की, तुमने अभी समझौता किया था न,

अब तोडने भी लगे ।"

मुझे लगा कि पत्नी अब फिर 'मम्मी' को याद करने के मूड म है। मैंने फिर हथियार डाल दिए ।

' अच्छा गृहदेवी ! अब और क्या क्या परिवतन कर डाला है जल्दी बताओ । मुझे 'चायास' लग रही है ।"

—"तुम्हारी चाय के लिए हीटर वाली केतली लाई हू, यह देखो कपडे धोने की मशीन और यह देखो वैक्यूम क्लीनर । यह आटा गूथने की मशीन कितनी अच्छी है न ।'

—"काम वाली और नौकर की छुट्टी करने वाली हो क्या ?"

—"नही तो ।

— 'क्या मतलब ?"

—मतलब यह कि यह सारी चीजें चलेंगी बिजली से । और हमारे यहा बिजली का भरोसा है नही । यह चीजें तो घर की शोभा बढाएगी । आने वालो पर कितना रौब पडेगा, नही ।"

—"ह भगवान !" मैंने अपना माथा ठोक लिया ।

—' तुम क्या अपना माथा ठोकते हो, माथा तो मुझे अपना ठोकना चाहिए । मैं तो घर की प्रगति के लिए इधर उधर से उधार मागती फिर रही हू अच्छी चीजो के लिए बाजारो म चप्पलें घिस रही हू हर समय घर को इक्कीसवी सदी मे ले जाने की टेंशन मे रहती हू और एक तुम हो "

"मेरी सरकार ! मेरी गहृदेवी ! मेरी घर की रानी ! मेरी सब कुछ ! अपनी यह टेंशन छोड दो । अपने पाच सितारा सपने को छोडकर सोचो कि तुम्हारा गरीब पति क्या चाहता है । बैठन को नया सोफा या खाने को अन्न ? यह कह कर चाय बनाने के लिए मैं रसोई म चला गया ।

जानता [illegible] वह मेरी बात पर सोचगी नही । उसन रगीन चश्मा पहना हुआ है सावन की अघी है, उसे पतझड क्यो दिखाई देगा । आखिर उसकी 'मम्मी ने उस पतझड देखने कहा दिया है ।

इस बीच मरी पत्नी ने घर को इक्कीसवी सदी म ले जाने क लिए, अपने सपन को पूरा करन के लिए—बहुत कुछ किया है । मेरी और बच्चों की अलमारी मे बचत के नाम पर जो कुछ था छापा मार कर उसे

जब्त कर लिया है। उसकी अपनी अलमारी सुरक्षित पडी है, उस पर छापा मारने की हम मे हिम्मत नही है।

घर म सब्जी, धोबी, दूध आदि का हिसाब लगाने के लिए केलकुलेटर खरीद लिया गया है। मौसम, शेयर मार्केट का हाल जानने के लिए 'टेलीटेक्सट' लगा लिया गया है। बच्चो की पत्रिकाए बद हो गयी हैं, अखबार बद हो गया है। केवल दूरदशन हाजिर है हर मज की दवा के लिए, पत्नी खाना एक समय ही खिलाती है, हमारे स्वास्थ्य के लिए यह बहुत जरूरी जो है।

पत्नी का सपना हमारी खुली आखो को बद करन की कोशिश म है।

डॉक्टरी सर्टिफिकेट महिमा

हम उस कालोनी मे नये-नये थे। मुझे जुकाम हो गया था और गला खराब था। जुकाम से मैं बहुत घबराता हू। अपने अन्दर की गदगी को इधर उधर फेंकना पडता है। नाक से निकला द्रव बार बार मुह से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करता है परन्तु रूमाल उन्हें मिलने नही देता। (इस जालिम जमाने मे दो दिलो को किसने मिलने दिया है ?) जुकाम भ्रष्टाचार के समान इधर उधर गदगी तो फैलाता ही है, दूसरो को भी भ्रष्ट करता है। दूसरे लोग आपकी इस नीति को पसद न करते हुए भी अपनी विवशता मे इस व्यवस्था को स्वीकार करते हैं।

मैं डॉक्टर की खोज मे निकला। देखा डॉक्टर डी० डाबर की दुकान पर अधिक भीड थी। जिस डाक्टर की दुकान पर अधिक भीड होती है वही अच्छा डॉक्टर होता है। प्रजातन्त्र का भीडवादी सिद्धात यही कहता है।

अपनी बारी आने पर मैं डाक्टर साहब के पास पहुचा। इससे पहले कि मैं अपना रोग बताता, डॉक्टर डी० डाबर बोले, "कितने दिन का दू ?"

'कितने दिन का " सुनकर मैं चौंका। उन्होने मेरा रोग पता लगाने से पहले ही कितने दिन की दवाई देनी है की जानकारी चाही थी। क्या उन्होने मुझ लिफाफे को खोले बिना मजमून भाप लिया था ?

मैंने कहा "जितने दिन मे ठीक हो जाऊ उतने दिन की दवाई द दीजिए।'

"दवाई!' डॉक्टर डाबर ऐसे चौंके जैसे मैंने पसारी की दुकान समझ कर उनसे धनिया माँग लिया हो।

"जी, मुझे बहुत सख्त जुकाम है उसके लिए दवाई चाहिए " मैंने कहा।

डॉक्टर डाबर ने मुझे अबोध समझते हुए कहा, "आपको शायद पता नही, मैं दवाई नहीं देता हू।'

मुझे समझ मे आ गया, मैंने कहा, "ओह, तो आप हिंदीवाले साहित्य के डाक्टर हैं। मैं भी हू मिलाइए हाथ।"

उन्होने हाथ नही मिलाया और खीझकर बोले, "मैं हिंदी विंदीवाला डॉक्टर नहीं हू, मेडिकल डॉक्टर हू। पर तु दवाई की जगह मेडिकल सर्टिफिकेट देता हू। आपको दफ्तर से छुट्टी चाहिए है ना?"

"नही, छुट्टी क्या करनी है, मुझे तो जुकाम है "

डाक्टर डाबर फिर झुझला गये। बोले, "आप बार बार क्यो बता रहे हैं कि आपको क्या बीमारी है। आप तो यह बताइए कि आपको दफ्तर से कितने दिन की मेडिकल लीव चाहिए—दस दिन की, पद्रह दिन की। बीमारी तो मैं लिखूगा। आप पेड क्यो गिनते हैं, आराम से मेडिकल सर्टिफिकेट लीजिए और घर जाकर आराम कीजिए।"

"मेडिकल सर्टिफिकेट से जुकाम ठीक हो जाएगा क्या?" मैं फिर जिज्ञासु बन गया।

"आराम करने स कोई भी रोग ठीक हो सकता है।"

'आप तो पढे लिखे हैं। सब जानते ही है। दवाई देने मे कितने झझट हैं। और आजकल कौन सी असली दवाइया आ रही हैं। रोगी ठीक न हो तो बदनामी अलग होती है। हमने तो साफ सुथरा काम रखा हुआ है। बस मेडिकल सर्टिफिकेट देते हैं, कोई चलेंज नही कर सकता है। जनता का भला अलग होता है।" डॉक्टर डाबर ने अपनी डाक्टरी प्रक्रिया समझाते हुए कहा।

मरी जिज्ञासा इस महापुरुष के बारे मे बढ रही थी। मैंने कहा, "मेडिकल सर्टिफिकेट देने से जनता का क्या भला होता है?"

"आप बहुत ईमानदार लग रहे हैं, इसलिए इतनी मूखतापूण बातें कर रहे हैं। आपको समझाना ही पडेगा, वैसे पढे लिखे को समझाना बहुत कठिन है। मेडिकल सर्टिफिकेट होने से आप आराम से बच्चे पाल सकते हैं, शादी-ब्याह मे जा सकते हैं, कोट मे तारीख आग की डलवा सकते हैं, बच्चो को घूमने ले जा सकते हैं, घर के काम काज कर सकते हैं और न हो तो मुह ढक कर आराम से सो सकते हैं। केजुअल लीव खत्म हो जाए और

छुट्टी चाहिए हो तो, तनख्वाह् क्टवायेंगे क्या ? मेडिकल लीव के लिए बीमार होने का सर्टिफिकेट चाहिए ही न०, यह सेवा हम करते हैं। और हमारी रेट भी कितनी कम हैं। एक हफ्ते के पाच रुपये, दस दिन क दस रुपये, तीन महीने के बीस रुपये। बीस रुपये दीजिए और तीन महीने आराम से कोई काम कीजिए, बिजनस कीजिए, बच्चे पालिए।"

मैं उनके ज्ञान से चमत्कृत था। मैंने कहा, 'हे महापुरुष मेडिकल सर्टिफिकेट से बच्चे कसे पलते है, इसकी व्याख्या करें।"

'बडी सरलता से पलते हैं। आजकल पति पत्नी दोनों कमाते हैं, ज्वाइट फेमिली रही नही। छोटा बच्चा कैसे पलेगा, विदाउट लीव ? कभी पति मेडिकल लीव ले और कभी पत्नी तीन महीने की एवाशन लीव ?"

'एवाशन लीव ?' मैंने आश्चय से पूछा, "बिना एवाशन के क्या सर्टिफिकेट मिल जाता है ?"

डॉक्टर डावर ने मुस्कराते हुए कहा 'क्या नही! अजी साहब मडिकल सर्टिफिकेट तो कलियुग का वरदान है। सतयुग त्रेता या द्वापर मे मेडिकल सर्टिफिकेट मिलते तो कई दुघटनाए होने से बच जाती। हरिश्चद सर्टिफिकेट दे सकते थ कि उन्ह झूठे सपने देखने का रोग है। श्री राम मेडिकल सर्टिफिकेट द सकते थे कि वह वन जाने के लिए मेडिकली फिट नही हैं। जुए म हार जाने के बाद शेष पाडव युधिष्ठिर के सबध मे मेडिकल सर्टिफिकेट दे सकते थे। महाभारत का युद्ध नही होता जनाब। आप क्या जाने इस मडिकल सर्टिफिकेट की महिमा।"

"पर यह तो सब झूठ है, गलत है।'

'भाईजान आप किस दुनिया म जो रहे हैं। आजकल तो सत्य भी झूठ के कधे पर चढकर जीतता है। सत्यवादी तो मुसीबत मे फसता है। दवाई देने मे आदमी मर सकता है, पर तु झूठा सर्टिफिकेट तो लोगों को मुसीबत से बचाता है।"

मैंने उनके चरणो पर लोटते हुए कहा, 'आप तो देश और जनता की बहुत सेवा कर रहे हैं।

डॉक्टर डावर ने मुझे अपने चरणो से उठाने के बाद अपन परा की उगलियां गिनते हुए कहा, "अजी क्हा, यह तो हमारा फज है।"

मैं समझ गया कि फर्जी मेडिकल सर्टिफिकेट देना उनका फर्ज था।

डॉक्टर डाबर ने मुस्कराते हुए कहा, "आप तो बहुत भोले हैं, क्या काम करते हैं ?"

"जी, कॉलेज मे पढाता हू।"

यह सुनते ही डॉक्टर डाबर अट्टहास कर उठे, "अरे साहब, आप तो बडी ऊची चीज हैं। फर्जी सर्टिफिकेट के ढेर पर बठे हैं। मुझे बना रह थे क्या ? आप लोगो के यहा तो यह धधा बहुत जोरों पर है। पाचवी पास बी० ए० की डिग्रिया लिए घूमते हैं। जानते हैं मैं डॉक्टर कसे बना ? आपको ही राज की बात बता रहा हू। आप तो अपने ही हैं। नम्बर कम थे। अनुसूचित जाति का सर्टिफिकेट बनवाया और घुस गये डाक्टरी मे। अपनी जान पहचान है आपको कभी चाहिए तो बताइएगा।"

मैंने यह सुनकर ईश्वर का धन्यवाद दिया कि उसने इस महापुरुष को झूठे मेडिकल सर्टिफिकेट बनाने की सदबुद्धि दी, वरना यह कितनो के स्वग के लिए सर्टिफिकेट काट दता।

"हा जी, कितने दिन का दू फिर सर्टिफिकेट ?" डॉक्टर अपने व्यवसाय पर लौट आए।

'जी अभी नही, फिर कभी। अभी जरूरत नही है।" मैंने कहा।

"अजी इतना समय लगाया है, एक हफ्ते का तो ले ही जाइए, केवल पाच रुपये की बात है। पाच रुपये आजकल के जमाने मे हैं ही क्या, आदमी पान खाकर थूक देता है चलिए आपको हम एक रुपये का कसेशन द देते ह।"

यह कहकर डॉक्टर डाबर ने मेरे नाम का सर्टिफिकेट बनाना शुरु कर दिया।

चलते हुए वह मुझसे गले मिले, ' देखिए हम आपके काम आये है आप हमारे काम आइएगा। आप अपने कालेज मे हमारे बारे मे बता दीजिएगा और मैं कुछ लोगा को आपके पास भेजूगा, दिलवा दीजिएगा बी० ए० के सर्टिफिकेट आप भी। आपके यहा तो स्टूडेंटस को भी एटेंडेंस के चक्कर मे मेडिकल चाहिए होता है।'

मैं जानता नही हू कि ऐसा कहकर उन्होंने मेरा दर्जा बढाया था, मेरा सम्मान किया था या मेरे मुह पर थूका था। मैं डॉक्टर डाबर होता तो मुह पर पडे थूक को साफ करके मुस्करा देता, परतु मैं गदन झुकाकर चला आया। एक नगे ने कपडे पहनने वाले को शर्मिंदा कर दिया था। धन्य है वे लोग जो फज और फर्जी मे अतर समाप्त कर देते है।

मेरा अच्छा पडोसी सुरेश

वह मेरा पडोसी है, अच्छा पडोसी है। उसका नाम सुरेश है। सुरेश मेरा शाश्वत पडोसी है। पहले वह मेरे घर के पास रहने के कारण पडोसी है। दक्षिण दिल्ली से पूर्व दिल्ली में मकान बदलने पर भी वह मेरा दिल्ली पडोसी है। हरियाणा, उत्तरप्रदेश अथवा राजस्थान में चले जाने पर वह मेरा राज्य पडोसी होगा। विदेश जाने पर वह मेरा विश्व पडोसी होगा। हमारा पडोसी होना शाश्वत है। जैसे-जैसे वह मुझसे दूर होगा यह सम्बन्ध और व्यापक होंगे।

हम दोनों के पडोसी सम्बन्ध बहुत अच्छे है—भारत पाकिस्तान, इराक ईरान, रूस-अमरीका की तरह अच्छे पडोसियों के समान हम बाहरी तौर पर सदा एक दूसरे की भलाई और सम्बन्धों में सुधार की बातें करते हैं, परन्तु अपनी अपनी बगल मे निरन्तर हथियार छुपाये रखते है। हम दोनों को एक दूसरे की पीठ बहुत पसन्द है और अवसर मिलने सी हम छुरे का प्रयोग करते हैं। हम ही दोनों शान्ति के कबूतर उडाते हैं, परन्तु अपनी अपनी बदूको से उसका निशाना भी बाधते रहते हैं। हम जब भी मिलते हैं, एक दूसरे से गले मिलते हैं और यदि फोटोग्राफर हो तो मुस्करा भी देते हैं।

पडोसी होने के कारण सुरेश मेरे स्वास्थ्य का बहुत ध्यान रखता है। वह मुझे कभी चाय नही पिलाता। मैं उसे चाय पीने के लाभ बताता हू और वह चाय न पीने के लाभ बताता है। अच्छे पडोसियो की तरह हम अगली चाय तक बहस स्थगित कर देते हैं तथा चाय पीने किसी मित्र के पास चल देते हैं।

उस दिन रात दस बजे किसी ने मेरी घंटी बजायी। "कौन है ?" मैंने शंकित स्वर मे पूछा।

"हम हैं।" किसी ने जवाबी अदाज मे कहा।

"हम कौन ?"

"सुरेश जी के अभिन्न मित्र दरवाजा खोलिए, देखिए, सुरेश जी ने आपके लिए क्या भेजा है!"

सुरेश से कुछ मिलना, काजल की कोठरी मे सफेदी और रेत मे मछली पकडने जसा है। पर यह व्यक्ति सुरेश नही था जो झूठ बोलता और फिर इतनी रात गये कौन झूठ बोलेगा! (वसे झूठ और रात मे कोई सम्बन्ध है क्या?) मैंने दरवाजा खोल दिया।

मरे सामने एक भयावह व्यक्ति खडा था—साढे छह फुट शरीर, बढी दाढी, बिखरे बाल और बडी-बडी लाल आखें। उसके हाथ मे बिस्तरबन्द और अटैची थी। उसने अटैची और बिस्तरबन्द नीचे रखकर जेब से पेन निकालते हुए कहा, "यह पन सुरेश जी ने भेजा है, आप उनके पास एक महीने पहले भूल आये थे।"

मेरी पत्नी ने उस व्यक्ति को देखा तो आतक के कारण चीख पडी। उसका हुलिया किसी को भी भयभीत कर सकता था।

मैं समझ गया कि पन भेजना सुरेश का मुख्य उद्देश्य नही है। इसके पीछे बहुत बडी साजिश छिपी हुई थी, क्योकि वह पेन मेरा नही था। कहीं यह व्यक्ति 'अतिथि' बनाने की योजना से तो नही भेजा गया है?"

"ठीक है पेन मुझे मिल गया है, सुरेश जी को मेरा धन्यवाद कहिएगा।" मैंने दरवाजा बद करने की प्रक्रिया मे कहा।

पडोसी मित्र ने दरवाजा खोलने की प्रक्रिया म कहा, "सुरेश जी को तो धन्यवाद हम अब कल ही कहगे। इस समय तो आप थोडे से जल का प्रबध करवाइए, बहुत गर्मी पड रही है। बच्चे बडे प्यासे हैं।"

"बच्चे!" मेरा मुह आश्चर्य से खुला रह गया। उन्होंने मेरे खुले मुह को खुला ही छोडकर दरवाजा खोला और एक पत्नी तथा तीन बच्चो सहित सोफे पर पधार गये।

"जरा पखा तो चला दीजिए। अरे, आपके पास तो फ्रिज भी है! सुरेश जी के यहा तो हम गर्म पानी ही पीना पडा था। यहा बढिया रहेगा, क्या?"

अब मैं क्या कहता ! सुरेश ने ऊट को पूरी तरह प्रशिक्षण देकर भेजा था। ऊट ने सोफा सभाल ही लिया था और थोडी देर म चारपाई भी सभालने वाला था।

"आपको मैंने पहचाना नहीं।" मैंने हाथ मलते हुए जिज्ञासा प्रकट की।

"हमे पहचानेंगे भी कैसे ? पहली बार भेंट जो हो रही है। पर पत्रिकाओ म हम आपसे निरन्तर भेंट करते हैं न ! हम रामओतार 'मयूख' है। आपने हमारी कविता तो पढी ही होगी। सुरेश जी ने पिछले से पिछले बरस जो कविता विशेषाक निकाला था, उसके चौबीसवें पेज पर छपे थे हम। सच, सुरेश जी हमे बहुत प्रोत्साहन देते है। अब देखिए न, आप जैसे महान साहित्यकार के दरसन करवा दिये। आप भी हमारी रचनाओं पर अवश्य राय दीजिएगा। हम लाये है रचनाए साथ म। आज रात हमारी आपकी कवि गाष्ठी जमगी। बच्चो और पत्नी के खाने सोने का जम जाये तो हम दोनो जमते ह हा हा " वह न जाने क्यो हम पडा।

जैसे लोगो को कॉकरोच, छिपकली आदि का देखकर लिजलिजाहट हाती है वैसे मुझे 'मयूख' जैसे कवियो को देखकर होती है। जब ये कविता सुनाने की बात कहते ह तो लगता है जैसे परमाणु-युद्ध आरम्भ होने वाला है।

मैंने उन्हे टालने के इरादे से कहा, 'देखिए, मुझे सुबह बहुत आवश्यक काम से जाना है, पत्नी और बच्चो को स्कूल जाना है, इसलिए देर रात तक "

"चले जाइएगा न सुबह। सच्चा साहित्यकार रात रात भर जागकर ही तो विश्व के हलाहल को पीता है। आप तो महान साहित्यकार हे न, साहित्य से आवश्यक क्या काम होगा ! अब आप और हम जसे बुद्धिजीवी आम आदमी की नही सोचेंगे तो कौन सोचेगा, छाबडी वाला ? अरे, हम और आप पर ही तो गहरी जिम्मेदारी है, कुछ कर दिखाने की। समझ गये न आप हमारी बात को ? देखिए, इस गीत म हमने इस बात को किस

तरह से उठाया है।" यह कहकर वह अपना थैला टटोलने लगे।

मैं समझ गया कि 'मयूख' जी का साहित्यिक प्रेम मेरा ही नही, मुहल्ले का जगराता करायेगा। मैं सारी रात उनके स्वर से आतंकित होता रहा। परन्तु सुबह उनके उठने से पहले, 'मयूख' जी को सोया छोड सुरेश नामक सत्य की खोज मे निकल पडा।

मैंने सुरेश से मिलते ही कहा, "यह किस बीमारी को भेज दिया मेरे यहा ?"

"किसकी बात कर रहे हो ? मैंने तो किसी को नहीं भेजा है तुम्हारे यहा।" सुरेश के चेहरे पर भोलापन था।

"क्या, रामऔतार मयूख को नहीं भेजा है तुमने ?"

"मैं क्या भेजने लगा ? तुम्हारा पता पूछ रहा था, मैंने बता दिया, बस।'

"और वह पेन ?''

"पेन, कौन सा पेन !" सुरेश ने साश्चर्य कहा।

मैं समझ गया कि सुरेश कुछ भी स्वीकार नही करेगा। इससे हमारे पडोसी-सम्बन्धो मे दरार पडने का खतरा था। अच्छे पडोसियो की तरह हमने भेंटवार्ता की और अपनी-अपनी बातो पर अडे रहे। मैंने मुस्कराते हुए उससे हाथ मिलाया। चलते समय सुरेश ने अच्छे पडोसी का परिचय देते हुए कहा, मेरी सहायता की आवश्यकता हो तो बताना।"

घर लौटा तो कृष्ण के पास से लौटे सुदामा की तरह मैं भी चौंक गया। वह फ्लैट मेरा नही लग रहा था। सुदामा को तो झोपडी के स्थान पर महल बना मिला था। परन्तु मेरे फ्लैट को 'मयूख-परिवार' ने जिस हालत मे पहुचा दिया था, उसे कबाडखाना कहना ही उचित होगा।

मयूख जी के बच्चो ने हर चीज को खिलौना समझा था। टेलिविजन-स्क्रीन खिडकियो के शीशे, शृंगारदान यानी जिसका भी दिल शीशे का था, वह हजार टुकडों मे बिखरा पडा था। मेरे दोनो बेटो के माथे पर बधी पट्टियां मयूख जी के बच्चो द्वारा किये गये वीर-कर्म की खुली घोषणा कर

रही थी। और इस सबके बीच 'मयूख जी' मुहल्ले के तथाकथित कवियो की 'गोष्ठी' जमाये अच्छे जलपान के साथ काव्यपाठ कर रहे थे।

यह देखकर मेरे मुह से आह के स्थान पर निकला—'सुरेश'।

अब मुझे किसी और 'मयूख' की तलाश है। अच्छे पडोसी, सुरेश का बहुत ख्याल जो है मुझे।

सुन्दर पड़ोस

इन दिनों मैं मोहल्ले मे अचानक महत्वपूर्ण हो गया हू, मरी पूछ बढ गई है। पडोसियो को मरे हाल चाल की चिंता रहने लगी है। मैं जरा सा भी छीकता हू तो सारे मोहल्ले को जस नुमोनिया हो जाती है। खासता हू तो तपदिक के भय से शकित मोहल्ला प्रभु स्मरण करने लगता है। बारी बारी स मोहल्ल क पुरुष मरा हाल चाल पूछने चले आते हैं। मैं नही चाहता हू फिर भी वे चले आते हैं। मैं इस अतिरिक्त सौहार्द स घबरा गया हू।

मरे छीकने पर सक्सेना साहब की प्रतिक्रिया "आज सुबह तो आपन बडी जोर स छीक दिया। मेरा तो दिल ही बैठ गया, पता नही क्या हो गया आपको, मैं शेव बना रहा था। उसके बाद नहाना था, पर तु मुझसे रहा नही गया और आपको दखने चला आया। आप ठीक है न ।' ऐसा कहते हुए वह मेरी ओर नही मेर पडोस म झाकते हैं और साथ मे हैं हैं की खाली म बेमतलब हाल पूछते रहते हं।

उनके जाने के कुछ समय बाद राधेलाल जी आ जाते हैं। इस मुद्रा मे हडबडाए हुए है जस चुनाव के समय टिकटार्थी हडबडाए रहते हैं। 'आप-आप भी कमाल क हैं हमे बताया तक नही कि सुबह आपको बहुत जोर से तीन छींकें आइ। अब यह बात भी हम सक्सेना से पता चली। बडे शम की बात है अब पडास म रहत है हमारा भी ता कुछ धम है ।' यह कहते हुए राधेलाल जी पडोस धम निभाने के लिए पडोस दशन करन लगते हैं। राधेलाल जी ही नही, जाशी जी शर्मा जी, वासल साहब, कपूर साहब, आयगर साहब, सबको पडोस धम याद आ रहा है ।"

पहले पडोस धम किसी को याद नही आता था। मेरा बटा बीमार रहा, इलाहाबाद म दादा जी का स्वगवास हुआ परन्तु मोहल्ला लोकसभा अध्यक्ष सा निर्लिप्त होने का सफल अभिनय करता रहा। राजधानी की भागदौड म सब बुरी तरह फसे हुए थे, फुसत कहा थी। किसी बीमार को

देखना, किसी का हाल चाल जानना, किसी को सात्वना देना, ये सब फुसत के ही काम हैं। कितने लोग रोज बीमार होते हैं, मरते हैं, आज के महा-नगरीय आदमी के पास कहा इतना समय है। और फिर इस सब मे मिलने वाला क्या है?

परन्तु अब जैसे बदल गया है। मानसून की वर्षा अच्छी हो गई है। सूखे के स्थान पर हरियाली छा गई है। पहले मेरे पडोस मे 62 वर्षीय वुढिया रहा करती थी। दमे की मरीज, कौन आता बलगम का सौदय निरखन, खासी की सरगम सुनने। आजकल मरे पडोस म पहाडो का प्राकृतिक सौदय आ बसा है। झरने फूट रहे हैं और कोयल जय विजय गीत गा रही है, बाईस वष की सौदय प्रतिमा जो सदव परफ्यूम मे डूबी रहती है, नाम है निहारिका—अकेली रहती है। (अकेला सौदय वैसे भी आकषक होता है।) उसके अकेले रहने से मोहल्ला निश्चित भी है, चितित भी है। मरे घर से यह प्राकृतिक सौंदय साफ दिखाई देता है—कभी चाय पीता हुआ और कभी नहाता हुआ।

मोहल्ले के अधिकाश 'मद' एक पत्नी व्रत और मर्यादाशील जाने जाते हैं। इसलिए वेचारे सीधे दशन का लाभ उठाने स डरते हैं। बहाने से मेरे घर आते हैं, मेरी छीक हाल पूछते हैं और मन ही मन भजन गाते रहते हैं—दशन दो घनश्याम नाथ मरी अखिया प्यासी रे। जिन्हे दशन मिल जाते है वह निहाल हो जाते हैं। जिन्हे दर्शन नही मिलते हैं व मरी पत्नी के अभिभावक बन जाते हैं, उन्हे चारो ओर पतन-ही पतन दिखाई देता है। "भाभी जी, यह आजकल आपके पडोस म कौन आ गई है, बडी टिप टाप से रहते है। कुछ अजीब सा ढग है इसका।"

बेचारी भाभी जी—मरी पत्नी जिन्हे हर सुन्दर नारी अपने चालीस वर्षीय खिचडी बालो वाले प्रौढ पति के लिए मनका लगती है अपना दुखडा रोने लगती हैं। "न जाने कहा से आ गई है चुडल सी। न मा का पता है न वाप का टिचर पिचर करती है। जब देखो सेंट से भरी होती है। मुझसे तो वात नही करती है जब देखो इनसे आखें मटका-मटका कर बात करती है और ये भी '

सावधानी हटी दुघटना घटी के अदाज में श्रीवास्तव साहब मेरी पत्नी

को समझाते हैं, "भाभी जी ऐसी लडकिया तो बडी चालबाज होती हैं, पूरी जादूगरनी होती हैं। थोडा-सा मुस्कराकर मर्दों को बेवकूफ बना लेती हैं और अपने इशारो पर नचाती हैं। आप तो इसे घर मे बिल्कुल न घुमने दिया करो।" (यह दीगर बात है कि श्रीवास्तव साहब ने अपने घर के ही नही, दिल के भी सारे दरवाजे खुले रखे हैं, उस चालबाज के लिए।)

एक दिन गुप्ता जी मेरी खासी की आवाज सुनकर आते हैं, चाय पीते हैं, पडोस की बन्द खिडकी देखते हैं और मेरी पत्नी के लिए सूचना केन्द्र बन जाते हैं, "भाभी जी, पता नही कैसे कैसे लोग आते हैं इसके यहा रात रात भर आना जाना लगा रहता है। एक दिन तो यह रात के डेढ बजे घर आई। (आप डेढ बजे क्या कर रहे हो गुप्ता जी!) कई बार तो रात रात भर गायब रहती है। (और बेचारे गुप्ता जी सो नही पाते हैं।) पर हमें क्या, हम तो अपना ध्यान रखते हैं। हमारा तो मन साफ है। (दूसरो पर कीचड उछालने के लिए।)"

मोहल्ले का हर मर्द और उस मर्द की पत्नी हमारे सलाहकार, हित चिंतक और कृपा करने वाले हो गए हैं। मोहल्ले के इस धर्म पालन से मेरा पारिवारिक सिंहासन डोल रहा है। मैं घुट घुटकर छीकता हू, जिससे कोई पडोसी धर्म पालन की ओर हठात प्रेरित न हो जाए। मैं दबा-दबा खासता हू जिससे पडोस धर्म की हानि समझ कोई महान आत्मा मेरे घर अवतार न ले ले।

इस सुन्दर पडोस का कुछ कुछ लाभ भी हो रहा है। कोई खीर देने के बहाने से आता है तो कोई घर के बने बाजार—जैसे, छोले भठूरे देने आ जाता है। कोई सौंदर्य उपासक बाजार से सब्जी खरीदकर लाता है और अपने खेत की ताजा सब्जी बताकर हमे दे जाता है। डाकिया तक हर चिट्ठी देकर जाता है यहा तक कि कभी कभार रविवार को भी आ जाता है।

और निहारिका भी अपने भक्तो को निराश नही करती है। मुस्कराकर दर्शन देती है। वह मुस्कराती है तो चरित्र का सिंहासन डोलने लगता है। परन्तु सभ्यता व्यक्ति को कायर बना देती है। सभ्य व्यक्ति किंतु

परन्तु, लेकिन की शैली में चिंतन करता है। सीधे आक्रमण का साहस नहीं जुटा पाता है। अनेक चरित्रवान चरित्रहीन होने की उत्कट लालसा रखते हैं परन्तु साहस नहीं कर पाते हैं, अपनी कायरता को छिपाने के लिए अपने चरित्र का ढोल पीटते रहते हैं। ऐसे ढोल पीटने वाले बन्दूक चलाने के लिए अक्सर दूसरे के कंधे तलाशते रहते हैं। लुक-छिपकर चरित्रहीन होने में विश्वास रखते हैं।

चरित्रवान सभ्य मर्दों ने मोहल्ले का मौसम अपने अनुरूप कर लिया है, उन्हें अब मेरे कंधे की आवश्यकता नहीं रही है। मेरी छींक और खाँसने की आवाज सुनकर उनका दिल नहीं बैठता है, क्योंकि दिल तो सुन्दर पड़ोस को दे बैठे हैं। अब मैं भी खुलकर छींक सकता हूं, खांस सकता हूं। चतुर मर्द सीधा सम्पर्क करके डायल कर रहे हैं। सौन्दर्य दर्शन के लिए वे मेरे घर नहीं आते हैं। निहालिका के घर जाते हैं। मोहल्ले की चरित्रवान पत्नियां अब मेरे यहां आती हैं, अपना दुखड़ा रोती हैं, निहालिका को कोसती हैं, सुबकती हुई चाय पीती हैं और चली जाती हैं।

जिन श्रीवास्तव साहब ने मेरी पत्नी को सावधानी की सलाह दी थी, वही असावधान हो गए हैं। एक दिन निहालिका ने उनसे मुस्कराकर कह दिया कि उस दरीबे की जलेबी बहुत अच्छी लगती है। बस फिर क्या था, श्रीवास्तव साहब हरी घास को देखकर झूम उठे। लोगों को तो आसमान से तारे तोड़ने पड़ते हैं। श्रीवास्तव को तो जलेबी लानी थी, वह भी दरीबे से। श्रीवास्तव साहब ने अपना बढ़िया सफारी सूट पहना, एक सौ दस नं० की बस पकड़ी और बस में धक्के खाते पहुंच गए चांदनी चौक। वहां से 40 रु० किलो भाव की जलेबी खरीदी और इस डर से कि कहीं जलेबी ज्यादा ठण्डी न हो जाए स्कूटर रिक्शा पकड़ लिया। हैं हैं करते जलेबी का लिफाफा लिए पहुंच गए निहालिका के पास। अपनी फिगर का ध्यान रखने वाली निहालिका ने एक टुकड़ा खाया बाकी शेष जलेबी नौकर को दे दी। बेचारे श्रीवास्तव इसी में निहाल हो गए। (केवल सौ रुपये ही तो खर्च किए।)

जो हमें निहालिका से दूर रहने की सलाह देते थे, वही उसके ज्यादा समीप हो गए हैं। सक्सेना साहब ने उसे फोन करने और सुनने की सुविधा

प्रदान कर दी है—कोई उससे गुलाब का फूल पाकर गदगद है और कोई अंग्रेजी का फूल बनकर गदगद है। पतियो के जीवन मे बहार है और पत्नियो का जीवन पतझड बना हुआ है। मोहल्ले की नौजवान पीढी खूसटो को इस शोषण के विरुद्ध क्राति करने का विचार कर रही है, कुछ युवा तो खूनी क्राति के पक्ष मे हैं। कुछ युवा चितक, अध्ययन कर रहे हैं कि मार्क्स ने ऐसे सभा के लिए क्या कहा है।

बाईबल मे कहा गया है कि पडोसी से प्यार करो, अत करना ही चाहिए और सुदर पडोसी से तो एकदम ही करना चाहिए। सुदर पडोस तो बहुत भाग्य वालो को मिलता है। आजकल या तो पाकिस्तान जैसा पडोस मिलता है या फिर श्रीलका जैसा पडोस मिलता है। मुझे तो अच्छा पडोस मिला हुआ है। इसलिए सोचता हू, इससे पहले कि चिडिया खेत चुग जाए मैं भी बाईबल की बात मान ही लू।

ſ

रावण पजन

(दशहरा जब भारत मे आता है तो सारा भारत भक्ति-भाव से भर जाता है। भक्ति का एक नशा, हवा मे बस जाता है। ऐसे ही नशे से वशीभूत मैं, कुछ भक्ति लाभ प्राप्त करने के लिए पत्नी और बच्चों को जागता छोड चल पडा। घर मे, त्योहार पर उठने वाली फरमाइशो की चिल-पौ मची थी और इधर मेरा हृदय, महगाई के आतक से आतकित था। ऐसे मे घर से पलायन के अतिरिक्त कोई चारा नही था जो मैं खाता।

घर से बाहर निकलकर कुछ दूर पर भक्तो की भीड दिख गई। एक व्यक्ति प्रवचन कर रहा था परन्तु पहनावे से वह साधु महात्मा नही लग रहा था। उसने अमूल्य आभूषणो से युक्त चमकदार वस्त्र धारण किए हुए थे। मैं प्रवचन सुनने के लिए रुक गया, आप भी रुकिए।)

हे दुष्ट भक्तो! बहुत हो चुकी हमारी उपेक्षा, बहुत मूर्ख बन चुके हम। हमारा दुष्ट समुदाय इतनी बडी जनसख्या के होते हुए भी उपेक्षणीय क्यो है? क्या आपने कभी सोचा है? सतयुग या त्रेता म हमारी सख्या कम थी परन्तु कलयुग तो हमारा युग है। इस युग मे अगर बुराई की निंदा होगी, बेईमानी को लताडा जाएगा और 'सत्यमेव जयते' जसे नारे लगाए जाएगे तो समझ लो हम जड स उखड जाएगे। कलयुग हमारा युग, जो करना है हम इसी युग म करना है वरना दुष्ट शक्तियो का कभी उचित विकास नही हो पाएगा।

कभी आपने सोचा कि हम कलयुग मे भी पिछडे हुए क्या हैं? हम पर यह अ याय क्यो हो रहा है? मैंने सोचा है। इसका सबसे बडा कारण यह है कि हम दुष्टों का कोई ईश्वर नही है। आज जबकि सज्जनों के करोडों देवी देवता हैं। हमारा एक भी ईश्वर नही है। अपने कष्टो के लिए हम सज्जनो के दवी देवताओ के शरण मे जाना पडता है। धिक्कार है! इतने युग बीत गए, हम अपना एक भी भगवान खडा नही कर पाए, उसके लिए

एक मन्दिर का भी निर्माण नही कर पाए। और सज्जनो ने हर युग मे अनेक देवी देवता खडे कर लिए हैं।

यह कलयुग है, हमारा युग है। इस कलयुग मे जो दुष्ट है उसी को सुखी रहने का अधिकार होना चाहिए। यह बडे हर्ष की बात है कि भारत मे चारो ओर लूट पाट, हत्या साम्प्रदायिक झगडो का बाजार गर्म है। हमें इसे और गर्म करना है। इससे हम दुष्टो की कुर्सिया बची रहेंगी। हमे नेताओ को और भ्रष्ट करना है। हम अच्छे और भले लोगो का मनोबल तोडना है, उन्हें दूध मे से मक्खी की तरह निकाल कर फेंक देना है। हमे गुडागर्दी के हथियार से सज्जनो का मुह बन्द करना है। हमे यह भी देखना कि कोई भला आदमी अपना सर उठाकर न चल सके, हमे यह भी देखना है कि जो अगुली हमारी दुष्टता की ओर उठे उसे तोड दिया जाए।

सच्चा कलयुग तभी आ सकता है, जब किसी को किसी पर विश्वास नही रहे। हमे उन शक्तियो से सावधान रहना है जो देश मे सच्चाई को जमाने मे लगी हुई हैं। हमे स्वय तो दुष्ट बनना ही, प्रयत्न करना है कि एक दिन सभी दुष्ट बन जाए। इसके लिए हमे सज्जनता का लबादा ओढना पडे तो भी घबराना नही चाहिए। सबसे महान दुष्ट वही है जो दिखने मे सज्जन है परन्तु तन मन और धन से दुष्ट के अतिरिक्त कुछ और नही है।

आइए आज के इस शुभ अवसर पर हम दुष्टो के भगवान का निर्माण करें। वैसे तो इस देश म प्रजातन्त्र है और फैसला सब की राय से होना चाहिए परन्तु हम दुष्टो का कोई तन्त्र नही होता है, जो कुछ होना है, दुष्टता होती है। उसी दुष्टता के नाम पर मैं अपने अराध्य का नाम प्रस्तावित कर रहा हू आशा आप सब उसे स्वीकार करेंगे। मैं आपके सामने उस महान दुष्ट वीर का नाम प्रस्तावित कर रहा हू, जिसने सज्जनो क छक्के छुडा दिए। जिसने ससार की धन-सम्पत्ती को अपने कदमो पर बिछाया। जिसने हत्या, अपहरण जसे कम अनेको बार किए और कभी लज्जित नही हुआ। जिसने सज्जनों का जीना दूभर कर दिया। हमारे उस महान अराध्य का नाम है—रावण! रावण तालिया तालिया।

रावण उस महाशक्ति का नाम है जिसने अपने जीवित रहते हुए सज्जनो से हार नही मानी। कुबेर जिसके चरणो मे भेड की तरह पडा रहता था। जिसके राज्य मे सभी ऐश करते थे। कोई प्रतिबन्ध नही था। जिसके राज्य मे मदिरा और मास की नदिया बहा करती थी। अपहरण, हत्या, चोरी डकैती रिश्वतखोरी का अधिकार राजा या मत्रियो को ही नही था, अपितु यह अधिकार प्रजा को भी था। दुष्ट-शक्तिया फल-फूल रही थी।

हमारे अराध्य रावण को सच्चाई नही मार सकी। उसे मारने के लिए धोखे और विश्वासघात का आश्रय लेना पडा। हमारा अराध्य रावण मरा नही है। उसने तो बलिदान किया है। धोखा और विश्वासघात जैसे दुष्ट-मूल्यो का विकास हो, लोग इन्ही पर विश्वास रखें, इसके लिए उस महान दुष्ट वीर ने अपने प्राण त्याग दिए। हम दुष्टो को उस वीरता और दुष्टता का विकास करना है। हमे प्रतिदिन रावण पूजन करना चाहिए जिससे हमम दुष्ट शक्तिया विकसित हो।

हम चाहते हैं कि रावण का एक विशाल 'दुष्टालय' बनाया जाए। उसम करोडो रुपया से बनी हीरे जवाहरात की ऐसी रावण प्रतिमा स्थापित की जाएगी, जिसके सामने सज्जनो के भगवान फीके लगेंगे। इसके लिए हमे अपार धन की आवश्यकता होगी जो हमे दुष्ट-समुदाय से तो मिलेगा ही हम सज्जनो से भी लूट खसोट कर लेंगे। इसके लिए हम मन्त्रियो पुलिस वालो भ्रष्ट सरकारी कमचारियो, ठेकेदारो आदि का सहयोग लेंगे।

हमारे मन्दिर आलीशान होंगे, क्योकि हमारे भक्त आलीशान होग। आजकल दुष्टो को ही आलीशान होने का अधिकार है। हमारे अराध्य के मन्दिर मे डिस्को होगा, कैबरे होगा। मदिरा और स्मैक की नदिया बहेंगी। चारो ओर ऐश-ही ऐश होगी। हम इस बात का प्रचार करना है कि हमारा अराध्य न स्वय कष्ट सहता और न अपने भक्तो को सहने देता है। वह भक्तो की भी परीक्षा नही लेता। वह मदिरा पीता है। छत्तीस व्यजन खाता है। आजकल हर व्यक्ति ऐसा करना चाहता है, विशेषकर हमारे नवयुवक। हमे युवक-युवतियो को भक्त बनाना है।

हमारी योजना है कि आज रात नगर के बीचो-बीच ससद भवन के सामने रावण प्रतिमा को गाडा जाए। दशहरे वाली सुबह यह प्रतिमा धरती

का सीना फोडकर निकलेगी । बस उसी समय प्रेस-कांफ्रेंस बुलाई जाएगी । और दुष्ट मंत्रियो, भ्रष्ट नौकरशाहो की सहायता से हम वहा रावण मंदिर की घोषणा करेंगे । इस बार दशहरे पर रावण मरेगा नही जलाया नही जाएगा उसका अवतार होगा । हम देखेंगे कि कैसे और कौन-सी शक्तियां सत्य की विजय करती हैं । अब असत्य और अन्याय की विजय का नारा लगेगा ।

रावण मंदिर की घोषणा होते ही हम दूरदर्शन और आकाशवाणी से अनेक प्रायोजित कार्यक्रम प्रस्तुत करेंगे जो यह बताएंगे कि दुष्ट होना कितना सुखकारी है । हम ऐसे नाटको और कहानियो का निर्माण करेंगे जिनसे आप जनता को ज्ञात होगा कि रावण पूजन से कितनी संपत्ति मिलती है, कितनी एश होती है । रावण भगवान का नाम स्मरण करने से पुलिस तंग नहीं करती और बिगडे काम स्वय बनने लगते हैं ।

तो मेरे साथ आप सब लोग बोलिए—दुष्ट सम्राज्यपति रावण की जय ! दुष्ट वीर रावण की जय ! भ्रष्टाचाराधिपति रावण की जय !

वो नही आयी

शाम को घर लौटा तो पाया घरेलू-वातावरण बहुत उदास है। पत्नी किसी विरहिणी यक्षिणी-सी आखो मे देश की दुदशा सा जल भरे बठी है। जिस धूल मे खेल खेलकर हम बडे हुए हैं, वही धूल ड्राईंग-रूम मे मुक्त-भाव से खेल रही थी। रसोईं म पडे जूठे बतन जैसे समरुण पुकार रहे थे—'क्या हमे इक्कीसवी सदी मे ले जाने वाला कोई नही है' मक्खिया मुक्त भाव से गदगी का आतक फला रही थी और पत्नी हाथ पर हाथ धरे जसे किसी समझौते की योजना बना रही थी।

एक समय वह भी था कि मुझे देखते ही पत्नी की आखो मे प्रेम तैरने लगता था। उस दिन करुण रस झरने लगा बोली, 'देखा आज वो फिर नही आयी।"

आप भी चि तन मे पड गय होगे कि यह वा कौन है जिसके कारण पति पत्नी के बीच मे शृगार के स्थान पर करुण रस बरसने लगता है। क्या यह पति पत्नी के बीच का 'वो' है? प्रेमी प्रेमिका के बीच का 'वा' है तुम बडे वो हो, वाला वो है? या फिर कुआरो की सौ दय दृष्टि मे जो 'बडी वम चीज हाती है' 'वो'? जी नही इस 'वो' का प्रेम कथा स कोई सम्ब घ नही है। क्योकि जैसे दिये तले अधेरा होता है वैसे प्रेम तल कुछ हाता है। मेरा नाम प्रेम अवश्य है पर तु प्रेम कथाओ से मेरा कोई सम्ब ध नही है। अत चि तकों! इस 'वो' का भी प्रेम से कोई सम्ब ध नही है।

जैसे एक ईश्वर को हम अनेक नामो से जानते हैं। वैसे ही इस 'वो' को भी अनेक नामो से जानते हैं। कोई इसे माई कहता है, कोई बाई जी, कोई काम वाली कोई पाटटाइम काई चौका बतन वाली, कोई अम्मा और कोई आदि आदि।

यही 'वो' उस दिन हमारे यहां नही आयी थी, जिसक । घर आतकित लग रहा था। (कुछ लागो के आने से आतक

मुंह में ना आने से छाता है।) बच्चे इस बीच एक दो बार पिट चुके थे, पापहुर को केवल खिचड़ी बनी थी और यह निश्चित था कि रात का खाना बाहर खाना पड़ेगा।

अत पारिवारिक शान्ति के लिए 'वो' का आना बहुत आवश्यक है। अब आती रहे तो घर में बसन्त खिला रहता है न आये तो एक ही क्षण में घनमंड छा जाता है। यह 'वो' ईश्वर है जो अवतार नही ले तो घरेलू शान्ति की हानि होने लगती, भगत परीक्षा के सकट में पड जाता है और चारो ओर त्राहि त्राहि मच जाती है। 'वो' नही आये तो मोहल्ले में अफवाहों का बाजार गरम हो जाता है, फोन घनघनाने लगते हैं।

दृश्य एक

मोहल्ला और मोहल्ले की औरतें।

पहली देखा, खमनुखानी भज फेर नही आयी।

दूसरी अभी पिछले हफ्ते दो छुट्टिया की हैं। बच्चा बीमार था।

पहली सब झूठ बोल दी है। मैंने तो इसे निकाल ही देना है। पैसे काटूंगी तब होश ठिकाने आ जायेंगे।

तीसरी इसे निकालकर रखोगे किसे, सारी की सारी एक ही जैसी हैं।

पहली मैंने तो मिसेज मेहरा वाली माई रख लेनी है। बहुत कम छुट्टिया करती है।

दूसरी पर वो पूरी चोर है चोर।

पहली यह वाली भी तो कम नही है। हर वकत मागने को मुह अडगा (खुला) रखती है। कभी साडी दे दो, कभी बच्चों के कपड़े दे दो, काम थोडा ज्यादा हो जाय तो नानी मरती है। अब देखो इतना वकत हो गया, महारानी जी का पता नही है। कब झाड़ू पोछा होगा, कब बतन साफ होंगे। मेरे तो सिर मे दरद होने लगा है।

तीसरी हमारे यहा तो शाम किसी ने आना भी है। दिन भर झाड़ू-चौके मे लगी रही ता शाम तक बीमार बुढिया-सी लगने लगूगी। (यह सुनकर पहली और दूसरी आखो-आखों मे

मुस्कराईं कि अब तू कौन कम लगती है।) मैंने सोच लिया है, मिसेज मेहरा वाली से काम करा लूंगी।

पहली वो जरा नक्चढी है। ऐसे काम करती नही है।

तीसरी पूरा दस का नोट दूंगी और साथ मे खाना भी, भगवान का दिया बहुत कुछ है। खुला खरचते हैं। कजूसी नही करते हैं।

पहली होता तो सबके पास है, पर अपने भी हुडड पैर आदमी को चलाने चाहिए। बठे-बैठे तो चरबी ही चढती है जी!

तीसरी खाते पीते हैं तो चरबी चढती है, दूसरो के घर स घी चीनी की कटोरिया नही मागते फिरते हैं। हमारे घर को तो दखकर लोगो की छातियो पर साप लोटते हैं। यहा तो काम वाली को भी हम औरो से पाच रुपये ऊपर ही देते ह। काम देखकर हमारे सिर मे तो नही होता दद

पहली इतना गुमान ठीक नही होता, रावण भी अपनी लका बचा नही पाया था।

दूसरी तूने रावण कहा कुत्ती।

पहली तूने कुत्ती कहा खसमनुखानी।

दूसरी तूने खसमनुखानी कहा हरामजादी।

पहली तूने हरामजादी कहा राड।

इन उपमाओ को सुनकर कालिदास का सिहासन डोलने लगा और मोहल्ले की ललनाए वीडियो फिल्म बन्द कर दशक दीर्घा मे खडी हान लगी। जैसे कृष्ण की मधुर मुरली सुनकर गोपिकाए 'गृह-कारज छोडकर जसी अवस्था म होती थी, चल पडती था वसे ही इस समय मोहल्ल की ललनाए फसी-ड्रेस म निकल आयी थी। किसी के हाथ म बेलन था, किसी के हाथ बतन धोने वाली राख से भरे थे, कोई पेटिकोट मे थी, कोई गाऊन म और कोई नहाने के बीच तौलिये मे अपना यौवन छुपाए आ गयी थी।

अत हे सतो! सिद्ध हुआ कि मोहल्ले की शान्ति के लिये 'वो' का आना आवश्यक है।

दृश्य दो

फोन-वार्त्ता। वार्त्ताकार दो सभ्रांत महिलाएं।

पहली हैलो, क्या कर रही है तू ?

दूसरी कुछ नही सोच रही थी थोड़ा शापिंग के बहाने घूम फिर आऊं।

पहली हाऊ लक्की यू आर !

दूसरी क्या, क्या आज भी तेरी पार्टटाइमर नही आयी।

पहली नही (स्वर म प्रभाव की पीड़ा है)

दूसरी हाऊ सैड। तेरा तो नौकर भी छुट्टी पर गया हुआ है, तू मैनेज कैसे करेगी, तू तो बहुत बड़ी मुसीबत म फस गयी। कितनी टेंशन हो रही होगी तुझे। ज्यादा टेंशन ठीक नही है। तू मेरे साथ शापिंग पर चल लच बाहर करेंगे और आते हुए बच्चो के लिए पक करवा लेना। तुझ थोड़ा रिलीफ भी मिल जाएगा। (जस बाढ पीडितो को रिलीफ मिलता है।)

पहली आह वो बहुत काम फसा हुआ है। इस समय सारा घर कबाड़ बना हुआ है और शाम को मल्होत्राज आने वाले ह, डिनर पर

दूसरी फोन पर मना कर दे न, एक्सक्यूज माग ल।

पहली नही हो सकता बड़ी मुश्किल स फिक्स हुआ है। शरद की प्रोमोशन म मल्होत्रा साहब हैल्प करेंगे न, मुझे तो कुछ समझ म नही आ रहा है मेरा तो रोना निकल रहा है सुबुक सुबुक

दूसरी देख देख ऐसे नही करते, बी ए ब्रेव गर्ल न न रो मत बहादुर बन। हम लेडिज को तो अभी बहुत लडना है यू नो, आदमी न हम बहुत सताया है। घर का सारा भार हम पर लाद दिया है, हम क्यो करें घर की चिंता, पति के प्रोमोशन की चिंता, हम कमजोर होगी, रोती रहेगी तो ऐसे ही हम रुलाया जाएगा। तू विद्रोह कर दे। हम लेडिज को रोना नही स्ट्रगल करना है (जो भाषण दूसरी न 'महिला जागरण समिति म दिया था उसे याद था उसने यहा फिर दे डाला) पूरे एक घटे तक राष्ट्र की सचार व्यवस्था का एक अग—टेलीफोन सक्रिय रहा और जूठे

बतन निष्क्रिय रहे ।

इस 'वो' का महिलाओ के ही नहीं कुछ पुरुषो के जीवन मे भी महत्व पूण योगदान है ।

हमारे एक मित्र कालेज मे पढाते ह और उनकी पत्नी सरकारी स्कूल मे पढाती है, पत्नी सुबह साढे छह बजे स्कूल के लिए निकल पडती है और पतिदेव की कालेज म पढाने की सदिग्ध गतिविधि ग्यारह बजे शुरू होती है । पत्नी के जाने के बाद बच्चो को स्कूल भेजने स लेकर 'वो' से घर का काम करवाने का गुरू भार वही ढोते ह । परन्तु जब 'वो नही आती है, उस दिन विद्यार्थियो को पढते समय गुरुजी के हाथ में रसोईघर के दशन होते ह । छात्र छात्राए मुस्कराती ह और गुरुजी झिपियाते ह । ऐस मे अनेक बार उनके छात्र छात्राओ ने उन्हे 'वो तोडती पत्थर के' अदाज मे कपडे कूटते और बतन तोडते रगे हाथा पकडा है ।

कैसी विडम्बना है किसी काम को नारी कर तो यह उसका कतव्य है और पुरुष करे तो हास्यास्पद घटना ।

हम मौसम के कारण अपना मन बेईमान करने का तो पूरा अधिकार है पर तु कोई और करे तो आक्रोश के कारण हमारी मुटिठया कस जाती हैं । सरदी मे अपना मन रजाई मे छोडकर आफिस जाने का न हो तो फोन पर काम चल जाता है और अगर 'वो' रजाई छोडकर न आय तो घर का काम ठप्प हो जाता है । 'वो' को न तो मन बेईमानी करने का अधिकार है, न तबीयत खराब करने का और न ही उसके बच्चे का बीमार होने का अधिकार है । 'वो' वो है हम 'हम' ह ।

बालम गए सिंगापुर

बालम मोहल्ले मे एकाएक महत्वपूर्ण हो गये थे। वह मलेशिया की राजधानी कुआलालपुर विभागीय ट्रेनिंग के लिए जा रहे थे। परन्तु इन में सभ्रात लोगो का भूगोलीय ज्ञान इन दिनो अदभुत हो गया है। चाहे इन्हें देश मे स्थित विभिन्न राज्यो का न पता हो परतु सिंगापुर, हागकाग और दुबई के बारे मे इनका ज्ञान आश्चर्यजनक है। सब समझ गये कि बालम सिंगापुर जा रहे हैं। कुछ समाजसेवको ने तो बालम को कुआलालपुर से सिंगापुर जाने के यातायात साधनो, आने जाने के खर्चों की पूरी जानकारी दे डाली।

क्योंकि जर्मनी, फ्रास या इग्लैड जा कर इतना महत्वपूर्ण नही होता है जितना सिंगापुर जा कर होता है। बालम ही नही उनकी पत्नी भी मोहल्ले मे एकाएक महत्वपूर्ण हो गई थी। हर कोई हाल चाल पूछने लगता था, मोहल्ले मे अब फेयरफक्स महत्वपूर्ण नही था, बालम महत्वपूर्ण थे।

इधर बालम सिंगापुर जा रहे थे, उधर कुछ के सीने पर साप लोट रहे थे (कितने बहादुर हैं वे जो अपने सीने पर सापो को लोटन के लिए क्रीडा स्थल देते हैं)। मोहल्ले की ब्रजबाला निशा सूरी के साथ भी यही हो रहा था। निशा सूरी के हसबैड रूस गये थे, मोहल्ले ने घास भी नहीं डाली थी। ' हाय, बेदर्दी तुम क्यो नही गये सिंगापुर। मेरी किस्मत ही खोटी है। जाओ बेदर्दी, गुडगाव ही एक महीने के लिए चले जाओ वहा पुश्तैनी जायदाद ही देख आओ, जिससे मैं मोहल्ले को कम से-कम यह कह सकू कि बालम तो दस दिन को सिंगापुर गये हैं, मेरे हस्बैंड तो एक महीने के लिए वेस्ट जर्मनी गये हैं। गुडगाव से आते हुए दिल्ली पालिका बाजार से कुछ विदेशी वस्तुएं खरीद लाना। मोहल्ले म मेरी नाक कुछ तो बचेगी " ऐसा कह कर ब्रजबाला सूरी ने पति के चरण छुए और सजल नयनों से विदेश युद्ध के लिए पति को तयार करने लगी।

बालम मोहल्ले मे ही नही मित्रो और रिश्तेदारो मे भी चर्चित और महत्वपूर्ण हो गये थे। भाई-बहन, मामा मामी, मौसा मौसी, चचेरे भाइया और दूर-दूर के रिश्तेदारो का प्यार अचानक उमडने लगा था। हर कोई उन्हे आकर बधाइया दे रहा था और अपने प्यार तथा अपनी नजदीकी का अहसास दिला रहा था। बालम के यहा दूध और चाय की खपत बढ गयी थी।

बालम लोगो की निगाह मे सरकारी अफसर नही एक स्मगलर हो गये थे। किसी को वह वी० सी० आर० दिखाई दे रहे थे, किसी को टू-इन वन, किसी को कलर टी० वी०, किसी को केलकुलेटर, किसी को साडी का थान और किसी के लिए वह विदेशी सेंट की बोतल बन गये थे। बालम ईश्वर की तरह अनेकरूपा हो गये थे। किसी को वह हनुमान के रूप मे दिखाई दे रहे थे। हर भक्त यह सोच रहा था कि बालम विदेशी वस्तुओ की सजीवनी का पहाड ही उठा लायेंगे और प्रत्येक को नवजीवन प्रदान करेंगे। किसी को बालम सुदामा लग रहे थे जो झोपडी का सुख छोड कर जाने को थे और महलो का सुख लेकर लौटने को थे।

सारी बातचीत सारा घर जैसे सिंगापुरमय हो रहा था और इन सबके बीच बालम एक उजबेक की तरह खडे थे। जो भी आता, वह सिंगापुर से शुरू होता और सिंगापुर ही समाप्त होता। बालम नक्कारखाने म तूती हो गये थे, जिनकी तूती नही बोल रही थी। वे सबको बताना चाहते कि वह किस ट्रेनिंग पर जा रहे हैं, उससे क्या लाभ उन्हे और विभाग को होगा। परन्तु नक्कारखाने मे 'सिंगापुर सिंगापुर' की ध्वनि ही गूजती रहती। बालम के लिए ट्रेनिंग महत्वपूर्ण थी परन्तु मोहल्ले और रिश्तेदारो के लिए सिंगापुर जानेवाले बालम महत्वपूण थे। अब बालम कुआलालपुर मे ट्रेनिंग करते करते, उनके लिए सिंगापुर जाना आवश्यक हो गया था।

बालम के जाने से पहले सलाह मश्वरो का एक सिलसिला चालू हो गया था। यहा से बालम क्या ले जायें और वहा से बालम क्या लायें, इसके सबध मे अनेक सिंगापुर विशेषज्ञ अपनी राय प्रकट कर रहे थे। हर समझदार एक सूची बालम को पकडा रहा था।

—यहा से सूती साडिया, अचार, चाय और नमकीन वगैरह ले जाना।

—यहा से किसी टूटे-फूटे बैग या अटैची में समान ले जाना, वहा से बढिया बैग और अटैची ले कर आना।

—वी० सी० पी० ठीक नही रहता है वी० सी० आर, लाना आजकल जी 7 बढिया चल रहा है।

—कलर टी० वी० तो सोनी का बढ़िया रहेगा।

—अपने कपडे ज्यादा ले जान की जरूरत नही है, वहा बहुत बढिया मिल जायेंगे। मेरा साईज 34 है।

—डॉलर चाहिए होगे, कितने दिलवाऊ ?

—कस्टम पर अपना ही एक बदा है, आने से पहले फोन कर दना या चिटठी लिख देना सब करवा दूगा।

—पुत्तर तेरी दोनो मना दे ब्याह करने मे मैना वास्ते चगियां साडिया लै आयी।

—मेरे लिए स्टीरियो नही लाए तो भाया जी आपसे मेरी कुट्टी हो जाएगी।

—*साले साहब, हमारा भी कुछ हक है न तुम पर*

—अबे ओ घोचूराम, आते ही बढिया दारू पार्टी होनी चाहिए नही लाया तो बेटा घुसने नही देंगे।

एक बालम और सौ बीमार। पर लग रहा था इस बोझ से बेचारा अनार ही बीमार पड जायगा। बालम पछता रहे थे कोस रहे थे उस घडी को जब ट्रेनिंग पर जाने का पता लगाने पर खुश थे।

बालम समझ गए थे कि मोहल्ले की दष्टि म यदि मूख नहीं बनना है तो उन्हे सिगापुरिया बनकर लौटना ही होगा। घर म वी० सी० आर० से पहले बहुत चीजो की आवश्यकता है परन्तु अक्लमद दिखने के लिए उन्हे कलर टी० वी० और वी० सी० आर० लाना ही होगा, चाहे इसके लिए कितना ही उधार लेना पडे। कितना बढिया है अक्लमदी का सिगापुरिया मापदण्ड।

वसे तो उधार प्रेम की कची होती है परन्तु इन दिनो बालम के लिए

उधार प्रेम की सस्सी बना हुआ था, जितना चाहे बढा लो। जो भी उधार देता, अपनी फरमाइश लगा देता, जितना बडा उधार उतनी बडी फरमाइश।

बालम ट्रेनिंग पर चले गये। पूरा मोहल्ला अपनी निकटता सिद्ध करने के लिए विदाई गीत गाने एयरपोर्ट पहुचा। बालम के जाने से पूरा मोहल्ला जैसे बिहारी की नायिका हो गया था। बालम-पत्नी ही नही सब मिल कर विरह का सामूहिक गीत गा रहे थे 'लगातार जसे मोहल्ले के कृष्ण मथुरा चले गये हैं। जरा-सी आहट होती तो मोहल्ले का दिल सोचने लगता कि कही यह बालम तो नही।

और बालम निष्ठुर कठोर उनकी ट्रेनिंग की अवधि बढ गयी, वह बीच म नही आए। बालम-पत्नी अपनी सखी से बोली, "सुन री, बालम के न आने से मेरा वजन बिना डाइटिंग के घट रहा है। यह निष्ठुर कलमुही ट्रेनिंग मुझे बहुत पीडित कर रही है। हे प्रियसखि, ऐसे मे दस नम्बरी क्या कम थी जो स्टीरियो बजा कर दिल दुखाती थी, देरा जब पद्रह नम्बरवाली वी० सी० पा० ले आई है। मेरे बालम कब आएगे हे बादलो, हे घटाओ, हे पडो, ह सखी, जब भी कोई वी० सी० आर० का नाम भी ले लता है तो मर हृदय मे टीस उठने लगती है। आखें विदेशी साडिया देखने को तरस रही हैं। कान स्टीरियो की आवाज सुनने को बेचैन हैं, नाक विदेशी सेंट सूघने को मरी जा रही है, होठ विदेशी लिपिस्टिक न होने के कारण सूखे जा रहे हैं और हाथ साडियो का स्पर्श-सुख पाने को तरस-तरस जा रहे हैं। हाय, आए न बालम वादा कर के "

जब बालम लौटे तो वे सिंगापुरिये हो चुके थे। वह लदकर आए थे। लदने मे उन्होने धोबी के सेवक को भी मात कर दिया था। बालम कान्हा बने हुए विदेशी वस्तुओ का पीताम्बर पहने, मोर मुकुट लगाए विराजमान थे और गोपिकाए उन्हे घेरे हुए उनके मधुर मुरली से स्वर को सुनने के लिए तडप रही थी। बालम जमीन से दो-तीन इच ऊपर उठे हुए थे। उन्ह

यह देश, यहा के लोग गदे-मैले, असभ्य लग रहे थे। यहा की मिट्टी से उन्हें सिंगापुर का सीमेंट अधिक याद आ रहा था। उन्हें ट्रेनिंग पर जाकर सिंगापुर का महत्व का पता चल गया था। पहले वह ट्रेनिंग पर जाने के कारण सिंगापुर हो आए थे। अब वह सिंगापुर जाने के लिए ट्रेनिंग का जुगाड बिठा रहे थे।

मुझे भी हो गया है

कुछ हो जाए तो लोग दुखी हो जाते हैं। मुझे कुछ नहीं हुआ था, इसलिए मैं दुखी था। मैं बहुत दिनों से नहीं, वर्षों से इस प्रतीक्षा में था कि मुझे कुछ हो। जब मैं पतीस वर्ष का हुआ हूं तब से प्रतीक्षा कर रहा हूं कि शायद किसी दिन मुझे कुछ हो जाए। परन्तु यह जालिम जमाना मुझे कुछ होने नहीं दे रहा है। कुछ होने के लिए अनेक महापुरुषों ने क्या-क्या नहीं किया, क्या-क्या नहीं सहा, वही आजकल मैं भी सह रहा हूं। मेरे महापुरुष बनने में अब अधिक देर नहीं है। मुझे डॉक्टरों पर पूरा विश्वास है। डाक्टरों का कहना है कि पैंतीस की अवस्था के बाद व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए वरना रोग उसका ध्यान रखते हैं। मैं अपना ध्यान नहीं रख रहा था फिर भी रोग मेरी ओर ताक नहीं रहे थे। इन्तजार का मजा इश्क में ही आता है, किसी और तरह का इन्तजार तो नीम चढ़ा करेला हो जाता है।

उस दिन जब डॉक्टर ने देखने के बाद मुझसे कहा, 'आपको तो ब्रोंकाइटिस लगता है,' तो सुनकर लगा जैसे उसने स्विस बैंक में एकाउंट खोल दिया हो। मुझे विश्वास नहीं हुआ। मैंने पूछा, "सच? सच? आप सच कह रहे हैं डॉक्टर साहब? मुझे सच्ची ब्रोंकाइटिस हुई है?' मैंने डॉक्टर से गर्मजोशी से हाथ मिलाया और 'थक्यू वेरी मच' कहा। मन करोड़ों की दलाली पाने सा खिल उठा। चारों ओर विश्व शान्ति के स्वर सुनाई देने लगे और इक्कीसवीं सदी मेरा में साक्षात दर्शन होने लगे।

मैं ब्रोंकाइटिस से पीड़ित होकर प्रसन्न था परन्तु पत्नी प्रसन्न नहीं थी। मेरे खांसने और खखारने के कारण घरेलू शान्ति भंग हो रही थी। पत्नी को यह बाहरी शक्तियों का षड्यन्त्र लग रहा था जो टोटने-टोटकों द्वारा उसके घर को अस्थिर करने में लगा था।

अगर आप पतीस वप से ऊपर हैं, मध्यवर्गीय परिवार के हैं, शादी शुदा हैं ता आप भी महसूस करते होगे कि बिना शरीर के रोगी हुए आप महत्वहीन हैं। अगर आप हृष्ट पुष्ट हैं, निरोग हैं तो समझ लीजिए आपने हमाम मे कपडे पहने हुए हैं। आप किसी जन्मदिन या विवाह की पार्टी मे उजबक मे घूमते रहगे और आपसे बातचीत करने को कोई नही मिलेगा। मौसम, देश की राजनीति, खूबसूरत औरतो या देश मे बढते भ्रष्टाचार के बारे मे आप कितनी बातें कर लेंगे? अब तो इन विषयो पर बात करते हुए लगता है जैसे हम भैंस हो गए हैं और जुगाली कर रहे हैं। मैं ऐसी भैंस या व्याकरण द्वारा शुद्ध करके कहू कि भैंसा कई बार बना हू। सवादहीनता का यह कष्ट मैंने कई बार भोगा है। बार बार—'और फिर क्या हाल' 'सब ठीक है न ' 'और फिर ' की शैली मे उतरना पडा है।

अपनी महत्वहीनता का यह अपराध मुझे तब से होना शुरू हुआ जब से पत्नी से अपनी सखी या कार्यालय सहयोगियो के यहा जन्मदिन या विवाह के अवसर पर बलपूर्वक ले जाना आरम्भ किया। मैंने देखा लगभग प्रत्येक पत्नी सखी पति रोगी है और इस कारण महत्वपूर्ण है। कोई अपने ब्लड प्रेशर के कारण महत्वपूर्ण है, कोई पथरी के कारण, कोई शुगर के कारण, कोई स्पांडिलाइटिस के कारण और कोई बार-बार के नजले, जुकाम के कारण ही महत्वपूर्ण हुआ बैठा है। हर व्यक्ति अपने रोग का ऐसे बखान कर रहा है जसे कवि वसत का या चादनी रात का करते हैं। जुकाम न हुआ चादनी रात मे गिरते हिमकण हो गए या ब्लड प्रेशर न हुआ पूनम के चाद को देखकर समुद्र मे उठता ज्वार हो गया या शुगर नही हुई वसत मे खिलते फूलों का पराग हो गया।

जब मुझे ब्रोंकाइटिस नही हुई थी ऐसे अवसरो पर मैं पत्नी की सखी के किसी पति से कभी देश के हालात और कभी नौकरी के हालात का सूत्र पकडकर सवाद का सिलसिला चलाया करता था। यह हम दोनों जानते थे कि हम एक-दूसरे को बोर कर रहे हैं। ऐसे मे कोई वासल साहब आ जाते और पत्नी-सखी के पति से पूछते, 'और सक्सेना साहब आपके स्टोन का क्या हाल है? ऑपरेशन करवा लिया क्या?"

यह सुनते ही सक्सेना साहब खिल उठते और 'एक्सक्यूज मी कहते।

और इससे पहले कि मैं एक्सक्यूज करू वो वासल साहब की ओर आत्मीयता से उन्मुख हो जाते। वासल साहब भी इसी रोग से पीडित हैं। दोनो चाच से चोंच भिडा कर चर्चामय हो रहे हैं। ऐसे महानुभावो के लिए ही किसी शायर ने कहा है—'खूब बनती है जब मिलते हैं दो दीवाने।' ऐसे मे कौन-सा डॉक्टर ठीक है, होम्योपैथिक या एलोपैथिक, दर्द होने पर कौन क्या करता है, किस चाचा मामा को जब यह रोग लगा था तो उसने क्या किया था आदि आदि विषयो पर जो महाकाव्यात्मक चर्चा होती है, उसे देखकर कवि लज्जित हो उठते हैं। ऐसे मे या तो धैर्यवान श्रोता बनकर गम्भीर होने की नौटकी कीजिए या फिर अपने जैसे किसी निरोगी को पकडिए।

यही कारण है कि जब डॉक्टर ने मुझसे कहा कि ब्रोकाइटिस हुई है तो मैं दुखी न हुआ और न ही मैंने डॉक्टर से दवाई ही ली। मैंने डॉक्टर को फीस थमाई, 'थक्यू जी' कहा और प्रसन्न मुद्रा मे घर लौट आया। लोग जीवन में कुछ बनने के लिए, समाज मे प्रतिष्ठित होने के लिए क्या-क्या नही करते हैं, क्या-क्या नही सहते हैं, मुझे तो बार बार की खासी ही सहनी थी।

बीमार पति को देखकर पत्नी का प्यार भी अधिक उमडने लगता है। उसकी निगाह मे आप बेचारे जो हो जाते हैं। इन दिनो मेरी पत्नी का प्यार भी उमडने लगा है। विवाह के दो वर्ष बाद ही प्रेम की जो भाग बैठने लगी थी, अब फिर बनने लगी है। पत्नी को पति की सेवा का सुन्दर अवसर मिल गया है, उसका परलोक तक सुधर गया है। वह भी अपनी सखियो के बीच अपने पति की बीमारी की ग्लैमरपूर्ण चर्चा कर सकती है। वह भी अपने मेडिकल बिल का रोब मार सकती है। आजकल मेडिकल बिल भी स्टेटस सिंबल बन गए हैं।

ब्रोंकाइटिस के कारण घर मे गधा बनने से बच गया हू। जरा-सा भी बोझ लदता है तो मैं खासना शुरू कर देता हू। पहले धूल से एलर्जी थी, अब मुझे अनेक चीजो से हो गई है। जब कोई काम करने को मन न हो तब यह एलर्जी काम आती है।

डाक्टर भी मुफ़स खुश रहता है, उसका रेगुलर पेशेंट जो बन गया हू। अब वो मुझे दवाई ही नहीं देता है, अपना सुख दुख भी देता है। मेरे मित्र और पड़ोसी भी खुश हैं। कुछ यह सोचकर प्रसन्न हैं कि बड़ा निरोग घूमता था और कुछ इसलिए प्रसन्न हैं कि अब वो मुझ बेचारे की बीमारी की चर्चा करके महत्वपूण हो सकते हैं। अब मुझे किसी से मिलकर देश की राजनीति या मौसम के बारे मे चर्चा नही करनी पडती है। अब अखबार पढना भी जरूरी नही है।

बीमार होकर मैं ही नही भारतीय सरकार भी महत्वपूर्ण और चर्चित हो जाती है। सरकार आराम से चल रही हो, कोई गडबड घोटाला न हो रहा हो, चारो ओर सुख चैन की वषा हो तो लगता है जैसे देश म लोकतन्त्र मर गया है। अखबारें इमानदार नेता सी सुखी नदी लगते हैं और दूरदशन के समाचार गणित के पहाडे के समान। जैसे ही सरकार को रोग लगता है, लोकतन्त्र का मुर्दा उठकर बैठ जाता है, उसे बचाने के स्वर सुनाई पडने लगते हैं, रैलिया अगडाई लेने लगती हैं और पत्र पत्रिकाए भल्ले पापडियो के समान चटपटी हो जाती हैं। अत यह जरूरी है कि सरकार को बोफस या फेयरफैक्स जैसा रोग लगा ही रहे, वरना पत्नी की निगाह म हमकी भी इज्जत नही रहेगी।

मै नही माखन खायो

ऐसे लोग धन्य कहे जाते हैं जो मक्खन खाते नही लगाते है। ऐसे लोग आदरणीय हैं। अनुकरणीय हैं जो मक्खन खाकर बडी सफाई से मुह पोंछ लेत हैं और डकार तक नही लेते। कोई भी सरकार हो वह अपना मक्खन निकाल लेते हैं। इनसे पूछो कि क्या मक्खन खाया है तो ये अपना चेहरा सपाट कर लेते हैं और गूगे बहरे हो जाते है। ये कुछ नही कहते हैं जो कुछ कहता है इनका मौन कहता है।

परन्तु ऐसे लोग परम आदाणीय हैं, अनुकरणीय हैं जो घपाघप मक्खन खात हैं, बेशर्मी से मुस्कराते हैं और मानते नही हैं कि इन्होने मक्खन को छुआ तक हो। जनता इन्हें दपण दिखाती है, वीभत्स चेहरा देखकर ये आग बबूला हो उठते हैं और चिल्लाते हैं, 'य सब बाहरी शक्तियो का षडयन्त्र है उन्होने मुझे बदनाम करने के लिए सोते समय बरबस ये मक्खन मेरे मुह पर लिपटा दिया है।

ऐसे मे वे मक्खन को मुह से पोछने की चेष्टा नही करते, लगा रहने देते हैं जिससे सिद्ध हो सके कि बाहरी शक्तिया कितनी सक्रिय हैं। वे गाते हैं, 'मैं नही माखन खायो' और उनके साथ उनके चरण सेवक समूहगान गाते है 'तू नही माखन खायो'। चरण सेवक जिनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य कम, पुण्य सब कुछ इन श्रीचरणों पर लगा हुआ है। अपने बाल गोपाल का चेहरा तो आज तक इन्होने देखने का साहस नही किया है। इनके लिए चरण ही मुख है, चरण ही हाथ, चरण ही पेट है चरण ही आदि आदि है। ये चरण पवित्र हैं, और भक्तों को अथ सागर का लाभ देने वाले हैं।

इन चरणो पर जब भी सकट आता है तो तोदें हिलने लगती हैं। ऐसे आपात समय से चरण कसकर पकड लिए जाते हैं, ये चरण कभी झूठ नही बालते हैं, कभी गलती नही करते हैं, स्वच्छ एव साफ-सुथरे रहते हैं ऐसे

चरण थामने वाले को कुछ और दिखाई नही देता है। इन चरणो मे ही सारा देश सिमटा रहता है। ये चरण नही होंगे तो देश नही होगा। इन चरणो की धूल ही देश को साफ सुथरा बना सकती है। चाहे इन चरणो का मुख स्विटजरलैंड की ओर क्यो न हो।

मुझे माखन चोर ने स्वप्न म दशन दे डाले। (त्रिजटा की तरह मैं भी स्वप्न देखता हू।) मैंने कहा, हे राजीव नयन, हे चरण कमल, आपके श्रीमुख पर यह मक्खन कैसे लग गया ?

मधुकर बोले यह सब माया का प्रभाव है। मक्खन तो सत्य नही है। जो सत्य है वह दिखाई नही दे रहा है और जो असत्य है वही नजर आ रहा है। इसके लिए एक जाच आयोग बिठाना पड़ेगा। मैंने कप्यूटर से पता किया है। यह सब देश के गद्दारो का काम है जो विदेशी शक्तियो से मिल गए हैं। ये मेरे सिंहासन को हिलाना चाहते हैं।

'वे देश के गददार कसे हैं सवज्ञानी।' मैंने जिज्ञासा प्रकट की।

'जो हमारा विरोध करे, हमारी छवि खराब करे वही देश का गददार है। ऐसे गददारो को हम सब कुछ याद करा देंगे।' भाषण देने की मुद्रा मे आ गए। उन्होंने हाथ को माइक की तरफ अपने मुह के आगे लगा लिया। मैं बेईमानी और भ्रष्टाचार से उतना नही घबराता हू जितना भाषण से घबराता हू। बेईमानी और अन्याय तो दिखाई दे जाते हैं परन्तु भाषण मे क्या-क्या छिपा है कोई नही जानता। छिपा शत्रु सबसे अधिक खतरनाक होता है।

मैंने टोकते हुए कहा, 'अगर ये सब बाहरी शक्तियो का षडयन्त्र है तो नटवरलाल, बाहरी शक्तियो से हाथ मिलाने के लिए सात समदर पार जाने की क्या आवश्यकता है।'

'यह राजनीति है अतरराष्ट्रीय राजनीति हैं' वे मुस्कराए। और भारतीय राजनीति क्या है—मुह पर मक्खन लिपटे हुए होने के बावजूद मक्खन सा झूठ बोलना कि मैंने मक्खन नहीं खाया है। मैंने पूछा।

'मैं शपथ खाकर कह सकता हू कि मैंने और मेरे परिवार के सदस्यो ने मक्खन नहीं खाया है। वह तो मित्र लोग खा रहे थे। उस पार्टी मे मैं भी

पहुच गया। थोडा सा लग गया होगा।' माखन प्रिय क्रुद्ध होकर बोले।

'ऐसे मित्रो का साथ अब तो छोड दो श्याम। वरना सारा जमाना आपको माखन चोर के स्थान पर माखन डकैत कहेगा और आपकी वश परपरा '

उनका क्रोध यकायक बढ गया और वे मेरे स्वप्न से भाग गए।

माखन चोर अब भी माखन खा रहे हैं। देश मे छाछ रह गया है वह भी सूख रहा है। प्रेस विज्ञप्तिया जारी हो रही हैं, रैलिया आयोजित की जा रही हैं चारो ओर राजनीतिक मेले की धूम है। करोडो रुपया खच हो रहा है। गरीब का विनाश हो रहा है। वह मुफ्त म दिल्ली दशन कर रहा है। जाच आयोग की कठपुतलिया नाच रही हैं जनता सूरदास हो गई है और गा रही है—

बाल विनोद मोदमन मोह्यो भक्ति प्रताप दिखयो।

मुफ्त की दीपावली

इस बार देश म दीपावली कुछ पहले ही आ गयी है। पिछले वर्ष दीपावली पर या उससे एक दो दिन पहले ही कानफोड धमाके सुनाई देते थे परन्तु इस बार बहुत पहले सुनाई दे रहे हैं। पहले दीपावली के धमाके कुछ जानदार नहीं होते थ, पर तु इस बार जानलेवा हैं। एक धमाके से सारा देश हिल जाता है।

इस बार दीपावली अकेले नहीं आयी है, दो-दो त्योहारों का मजा लेकर आयी है। इस बार दीपावली के साथ होली की भी धूम है—खून की होली की। कुछ लोगो की जिद है कि वह दीपावली के साथ होली का उत्सव भी मनायेंगे। धम निरपेक्ष लोकतांत्रिक और समाजवादी सरकार इसम क्या कर सकती है, बेचारी ? धम का मामला है, ठेस कैसे पहुचाये ? और फिर आम चुनाव भी तो आने वाले हैं, अत सारा प्रजातन्त्र शा त बठा हुआ है। चितन कर रहा है अगला एलेक्शन जीतने का। सगठित हो रहा है अगला चुनाव जीतने के लिए। सयुक्त मोर्चा बना रहा है मत प्राप्त करने के लिए। कितने महान काय मे व्यस्त हैं हमारे प्रजातन्त्र के रक्षक !

उस दिन जब मेरी पत्नी ने मुझे सुबह-सुबह 'बड-टी' की जगह डाट पिलाते हुए कहा—"तुम तो ओपोजीसन की तरह हाथ पर हाथ धरे बठे रहना। जब चुनाव आए तो इससे उससे हाथ मिलाने को तडपते रहना। दीवाली करीब आ रही है और तुम्हें होश नहीं है। कुछ लाना-वाना है या कि नहीं। या फिर डी०ए० मिलने से महगी चीजें खरीदने का शौक हो गया है।'—तो मैं महात्मा बुद्ध की तरह तटस्थ मुद्रा मे बैठा रहा। मैंने चुस्की लगाकर पत्नी की डाट को पिया। वह अज्ञानी है, प्रजातन्त्र की नब्ज नहीं जानती है, उससे मैं क्या करता ? वह क्या जाने प्रजातन्त्र की खूबसूरती। कितना आराम है इस व्यवस्था मे। विरोधी दल विरोध कर रहे हैं और सरकार उस विरोध का विरोध कर रही है और बेचारी जनता को मालूम

नही है कि वह क्या करे ? वह तो 'पिगपाग' की गेंद की तरह दोनों के हाथों मे खेलने को विवश है ।

मैं पत्नी की बात कर रहा था, यह प्रजातन्त्र बीच मे कहा से आ गया ? पत्नी और प्रजातन्त्र मे क्या सम्बन्ध है ? परन्तु हमारे देश की व्यवस्था ही ऐसी है कि चाहे वो खेल हो या पति पत्नी सम्बन्ध, राजनीति उसमे आ ही जाती है ।

मुझे मालूम है कि इस बार दीपावली पर बम्ब और पटाके लाने की आवश्यकता नही है । देश के कुछ हितचिंतक जनता के मनोरजन का भरपूर ख्याल कर रहे हैं । बेचारे अमीर तो ले आयेंगे गरीबो का क्या होगा ? उन्हे भी तो मनोरजन चाहिए ।

फिल्म से मनोरजन करना अच्छी बात नही है। उससे बुजुर्गो की आखें खराब हो जाती हैं और युवक आखें चार करने लगते हैं । लडकी घर से भाग जाती है और लडका बिना मा-बाप की आज्ञा से शादी कर लाता है । अत फिल्म देखना बुरी बात है । परन्तु मूर्ख जनता समझती कहा है ? बेचारे शुभचिंतक बास और बासुरी का सबध ही समाप्त कर देना चाहते हैं । न सिनेमाघर होगे न लोग फिल्म देखेंगे, इसलिए सिनेमा घरो को बमो से उडा दो । अब ऐसे मे कुछ लोग भी उड जाए तो हमे माफ करना । हर अच्छे काम के लिए बलिदान की आवश्यकता होती ही है ।

कस मोहक और लुभावने दृश्य दिखाई दे रहे हैं इस बार दीपावली से पहले ।

शरारती बच्चे कुत्ते की दुम मे पटाखा की लडी बाधकर उसम आग लगा देते हैं । कुत्ता डर से उछलता है, कूदता है और बच्चे खुशी मे उछलते कूदते हैं । किसी को कुत्ते की दुम से पटाखा की लडी बाधना अच्छा लगता है तो किसी को रेल इजन की दुम काट देने मे आनन्द आता है । जो हाथ मजदूरी की लालसा मे फैले हो वह कट जायें तो कितना सुन्दर लगता है । जिन पैरो ने अपने गाव को कासो दूर छोड दिया हो, वो अब साथ छोड दे तो कैसा जादू लगता है । कितने पवित्र पावन हैं वो लोग जिन्होंने अनक मायाग्रस्त ससारी जीवो को इस असार भवसागर से पार लगा दिया । धन्य हैं वो लोग, धन्य है वो भारतभूमि जहा उन्होने जन्म लिया और जहा जन्म

लेने को देवता भी तरसत हैं ।

इस बार दीपावली पर जुआ खेलने की भी इच्छा नही रही है । जब से महाभारत पढा था तबसे जुआ इस उम्मीद मे खेल रहा था कि कभी तो कोइ युधिष्ठिर फसेगा । परन्तु अब अपनी जुआ खेलन की इच्छा कुछ लगन लगी है । देश महान लगने लगा है । सबसे बडा जुआ तो इस समय यहा हो रहा है । एक तरफ सरकार है और दूसरी ओर ? पैदल घोडे, हाथी—सब एक दूसरे से लडकर मर रहे हैं । उन्हें चलने वाले जिन्दा हैं जिन्दा रहगे । दोनो म से कोई भी 'शो' कराने या 'पैक' करने को तयार नही है । चालें चली जा रही हैं और मोहरे पिट रहे हैं ।

वैसे आजकल देशी चालें चलने मे हमारे प्रधानमत्री का विश्वास नही रहा है । इस देश मे अब उनके लिए रखा क्या है ? देश की समस्याओ का एकमात्र हल है गुट निरपेक्ष आन्दोलन का अध्यक्ष पद । वैसे इससे भी बडे-बडे हल हैं, बस वहा पहुचने की सीढी चाहिए और देश

अतिथि को सत्कार देना हमारी उज्ज्वल परम्परा रही है । इसलिए हम 'एशियाड और 'गुट निरपक्ष आदोलन' के लिए ऐसी सुरक्षा का प्रबध कर सकते हैं कि परिंदा भी पैर न मार सके परन्तु घर की मुर्गी हमारे लिए तो दाल बराबर है । 'एशियाड' और नैम एम० के साथ हमारी प्रतिष्ठा, हमारी राजपूती शान जुडी हुई थी । हम सर कटा सकते हैं झुका नही सकत । प्रतिष्ठा बनी रहनी चाहिए, लोगो का क्या है वो बीमारी से न मरे रेल दुघटना मे मर गए । प्रतिष्ठा बनी रहनी चाहिए ।

शुभकामनाए

नया वर्ष आ गया है, शुभकामनाए भी आ रही हैं। जैसे मत्री, पुलिस ठेकेदार, इजीनियर, बड़े बाबू, छोटे बाबू, सबके साथ भ्रष्टाचार जुड़ा हुआ है बस नये वर्ष के साथ शुभकामनाए जुड़ी हुई हैं। आपको नहीं चाहिए तब भी आपको मिलेंगी। डाकिया नए वर्ष पर आपको सलाम मारकर शुभ-कामनाए देगा और लेने के लिए हथेली आगे कर देगा। यदि आपने उसकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नही की तो वह वर्ष भर आपकी डाक व्यवस्था सुदृढ़ नही होने देगा। यह तो सजग भारतीय नागरिकों का चरित्र है। खाली हथेली खुजाती रहती है, काम नही कर पाती है। जिस बेचारे को अपने पेट की चिन्ता है वह दूसरे के पेट की क्या चिन्ता कर सकता है। वह तो दूसरे की रोटी पर अपनी नजरें गड़ा सकता है। इसी शान के फलस्वरूप हमारे सम्माननीय नेता पहले अपनी गरीबी मिटाते हैं फिर देश की गरीबी मिटाने की सोचते हैं यह दीगर बात है कि उनकी गरीबी सुरसा की तरह बढ़ती चली जाती है और देश कहीं दूर घुसलने मे खो जाता है।

वैसे हम लोग एक दूसरे के लिए मात्र नए वर्ष पर ही शुभकामनाए प्रकट करते हैं परन्तु कुछ लोग हैं जो देश का सदा शुभ चाहते रहते हैं। वे लोग देश को शुभस्वास्थ्य का लाभ कराने के लिए उसे कई आसन एक साथ कर डालते हैं देश को उलटा लटकाकर शीर्षासन करवाते हैं और स्वय सीधे होकर अपना उल्लू सीधा करते हैं। ब्रह्मचारी होकर देश को मोहमाया से दूर रहने की सद् शिक्षा देते हैं और स्वय देश की करुणा के लिए गोले-बारूद से खेलते हैं। देश निरन्तर जागता रहे, उसके शुभ के लिए देश के अन्दर शत्रु पैदा करते रहते हैं, बलैंस बराबर। इनकी शुभ-कामनाओं के फलस्वरूप ही देश जनसख्या की दृष्टि से छुटकारा पा रहा है। ये इनकी दुआओ का फल है कि जनता मे निडरता का भाव है, उसके हाथ मे स्टेनगन आ गया है और इसके हाथ मे तुच्छ

ब्रह्मचारी होता भी ऐसा ही है कीचड़, मे कमल के समान। मोहमाया, घन धान्य के लिए परन्तु उससे अलग।

वैसे विदेश के लिए निरन्तर शुभ और सुभ के अतिरिक्त सोचने वाले और भी बहुत लोग हैं। इनके लिए प्रत्येक दिन नए वर्ष का आगमन होता है। ये कभी देश की नाक बचाने के लिए जेब काट लेते हैं तो कभी फैशन के बल आधुनिक कपडे पहनाने के चक्कर मे उसे नंगा कर डालते हैं। ये भूखे लोगो के लिए महंगे मेलो का आयोजन करते हैं और उसमे करतब दिखा कर वाहवाही लूटते हैं। ये देश की नाक लम्बी करने के चक्कर म उसका चेहरा बिगाड देते हैं। ये अपनी कुर्सी के अतिरिक्त देश को सब कुछ मारी शुभकामनाए दे सकते हैं।

कुछ लोगो का शुभकामनाए देने का तरीका बहुत लाभदायक होता है। दूसरो का नव वर्ष शुभ कराते-कराते अपना शुभ करवा जाते हैं। सुबह सुबह शुभकामनाए देने के बहाने स आते हैं और चाय-नाश्ता हडप जाते हैं, दोपहर दोपहर को कही और शुभकामना देकर भोजन करते हैं और दर आयद दुरुस्त आयद के अदाज मे रात को नव वर्ष को शुभ करते हुए दूसरे की जेब हल्की करते हैं। वैसे नव वर्ष के भक्त चाहिए ये तो ऐसे पराक्रमी जीव हैं कि सारा साल ही नया करते रहे और आपको पता भी नही चल।

ये नए वर्ष की शुभकामनाए व्यापार भी चोखा करवाती हैं। अनेक लोगो की जीविका का साधन बनती हैं। ग्रीटिंग कार्डों, डायरियो, कलैंडरो की भरमार हो जाती है। लोग देने नए वर्ष की शुभकामनाए की जाते हैं ? डायरी और कलैंडर आते हैं। ऐसी शुभकामनाए नौकरी से लेकर ठेके तक दिलवा देती हैं। क्योंकि खाली चीज देने का भारत मे रिवाज नही है। चाय के साथ बिस्कुट और डायरी और कैलेंडर के साथ बच्चो के लिए मिठाई और पत्नी के लिए उपहार देने का रिवाज हमारी भारतीय परपरा की ही देन है। चतुर सुजान लोग भी खाली शुभकामनाए, ग्रीटिंग कार्डों स नही भेजते हैं अपितु स्वय जाकर शुभकामनाए देकर आते हैं और बदले मे भरी शुभकामनाए ले भी आते हैं। मेरी पत्नी मुझे नकारा समझती है क्योंकि मुझ मास्टर के पास कोई भारी शुभकामनाए नहा लेकर आता है, चौदह नम्बर वालो के वो बडे सकारा हैं क्योंकि उनके पास कार मे नए वर्ष की

भरी शुभकामनाए आती हैं।

इसलिए जब नया वष आता है तो मैं अपनीपत्नी के सामने गिर जाता हू। आजकल ये विद्यार्थी भी बहुत ज्ञानी हो गए हैं भरी शुभकामनाए सीधे परीक्षा विभाग के क्लर्कों को दे आते हैं।

अत हे पाठको इस ज्ञानी (राजनतिक ज्ञानी नही क्योकि राजनीति मे हर शब्द उल्टा ही अथ देता है) प्रेम जनमेजय का कहना है कि तुम भी नए वर्ष का लाभ उठाओ और इस अवसर पर जब कुत्ते की टढी दुम भी सीधा हो सकती है तुम अपना उल्लू सीधा करो। आज का युग कुछ लेकर ही देने का है इसलिए किसी को व्यय म शुभकामनाए देकर अपने को व्यय मत करो। ब्रह्मचारियो के समान कीचड मे कमल के समान वास करो और योग और ब दूक की विद्या सीखो। मेरी समस्त शुभकामनाए आपके साथ ह। आपको नव वष मे मध्यावधि चुनाव मिले और आप अपने वोट की कीमत वसूल कर सकें। देश मे भ्रष्टाचार फले फूले जिससे आपके बिगडते अनैतिक काय सरलता से बनें। मेरी शुभकामनाए हैं कि आपको ऐसा नेता मिले जो निर तर आपकी नाक की लम्बाई की चि ता करे। और हा इन सब शुभ कामनाओ के लिए मुझे कुछ नही चाहिए क्योकि मुझे जो चाहिए वह सम्पादक दगा और सम्पादक को शुभकामनाए "

डूबते सूरज का इश्क

क्लब मे पहुचते ही श्री ज्ञानप्रकाश त्रिपाठी की आखो ने जो पहला काम किया, वह था श्रीमती आभा मुखर्जी को ढूढना। श्रीमती मुखर्जी क्लब की नई सदस्या हैं और जब से आई हैं श्री त्रिपाठी की आखो के सहारे दिल मे उतरकर हलचल मचा रही है। यही कारण है कि दिल से विवश श्री त्रिपाठी की आखें क्लब मे कुछ और देखना पसन्द नही करती हैं। जबकि क्लब मे कई सुन्दर वस्तुए हैं—सबसे बढकर श्री त्रिपाठी का मन पसन्द खेल 'पपलू' है जिसमें वह जीतते हैं और जब तक क्लब का चौकीदार हाथ जोडकर विनम्रतापूर्वक उठा नही देता है, तब तक न तो वह स्वय जाते हैं और न ही दूसरे को जाने देते है। परन्तु बुरा हो आभा मुखर्जी का, जब से आई हैं आखें ताश के पत्तो पर टिकती ही नही है। जब तक क्लब मे नही आती हैं, आखें दरवाजे पर टिकी रहती हैं और जब आ जाती हैं तो उन पर टिक जाती हैं। ऐसे म पपलू जाए भाड मे।

दिल की हालत ऐसी तो कभी नही हुई थी। ताश के पत्तो से हर रग के बावन वसन्त देख डाले परन्तु किसी वसन्त म कभी ऐसा नही हुआ। उस उम्र म भी नही, जब उम्र का तकाजा ही यही होता है। और फिर श्री त्रिपाठी का प्रेम के मामले मे सिद्धात यही रहा है कि इसे हृदय रोग न बनाया जाए। चार्वाक के सिद्धान्तानुसार श्री त्रिपाठी न कई बार उधार लेकर 'घी' पिया है और फिर उस गली म जाने का सोचा भी नही है। ईश्वर का दिया हुआ चेहरा भी ऐसा है कि यौवन म जिसने इन्हे देखा उसके मन म श्री त्रिपाठी को दिल देने की इच्छा हुई। और हमारे त्रिपाठी जी भी इतने उदार हृदय रहे कि इन्होने किसी को कभी निराश नहीं किया। इसलिए न कोई टिका और न बात दिल तक पहुची। घरवालो ने विवाह के बन्धन म बाधा तो सौभाग्य से पत्नी ऐसी मिली जिसे अपनी घर गृहस्थी म फुरसत ही नही मिल पाई। एक के बाद एक पाच सतानों के

पालन पोषण मे जीवन की चचलता कब डूब गई उसे स्वय पता नही चला। अब तो घर से बाहर निकलते जैसे श्रीमती त्रिपाठी की आखें चुधियाती हैं।

परन्तु श्रीमती आभा मुखर्जी को देखते ही श्री त्रिपाठी के हृदय मे न जाने कैसा-कैसा होने लगा था। देखते ही पाने की इच्छा जागरित हो गई थी। मन म जसे कहा था ज्ञान बाबू चीज अच्छी है, बुढापा सवर जाएगा। और आभा मुखर्जी दखने मे आकर्षक, सुगठित। आयु चालीस के आस पास की परन्तु बगाल के सौदर्य ने जैसे उम्र को छुपा दिया था। बडी बडी आखें जिनम डूबने की गहराई अब भी विद्यमान है, बस उतरने वाला चाहिए। काले लम्बे बाल, (डाई किए हुए) व्यक्तित्व मे ऐसा दबदबा कि पहली बार मिलने वाला व्यक्ति हिचकिचाए, एक अजीब-सी हीन भावना मे ग्रस्त हो जाए। यही श्री त्रिपाठी के साथ हुआ और जीवन मे पहली बार हुआ। कहा श्री त्रिपाठी का पहली बार म 'आई लव यू, म हत हुए अगुली पकड पहुचे पर पहुचने वाला व्यक्तित्व और कहा यह हालत कि एक नजर को तरस रहे हैं। ऐसा भी क्या ? परन्तु हो कुछ ऐसा ही रहा है। आखो के रास्ते आभा मुखर्जी हृदय तक पहुच गई हैं। निगाहें मिलते ही श्री त्रिपाठी के शरीर मे झुरझुरी सी दौड जाती है और फिर त्रिपाठी जी बगले झाकने लगते हैं।

चार दिन म श्री त्रिपाठी की यह हालत हो गई है। बुढापे म (बुढापा आए दुश्मनों पर) एक तो वैसे भी नीद नही आती है और जो आती थी उसे श्रीमती आभा मुखर्जी ले उडी। क्लब से घर पहुचते ही लगने लगता है जस ससार भर की घडिया रुक रुककर चल रही हैं। सबकी सब जस श्री त्रिपाठी की दुश्मन हो गई हैं। घर अजनबी-सा लगता है। आखें तारो के समूह मे आभा की आकृति बनाती और ढूढती रहती हैं। कई बार खीझ आती है कि क्लब शाम को ही क्यो खुलता है, सारा दिन क्यो नहीं खुला रहता है। और फिर क्लब खुलने क आधे घटे बाद आभा मुखर्जी क्यो आती हैं क्लब खुलने स पन्द्रह मिनट पहले भी तो आ सकती हैं। इन हिन्दुस्तानियों में यही तो बुराई है कि कभी समय स पहले नही पहुचते हैं।

और विडम्बना यह कि श्री त्रिपाठी की इस पीडापूर्ण दशा को श्रीमती

आभा मुखर्जी को भनक भी नही है।

चार दिन हो गए पर तु अभी तक आभा मुखर्जी से सही तरह स 'हैलो' तक नही हो पाई। 'हैलो' तो हो जाती पर तु श्री त्रिपाठी की हिम्मत ही नही पड रही है। वैसे क्लब की लगभग सभी (सु दर) महिलाओ से श्री त्रिपाठी का परिचय है और यह परिचय आते ही श्री त्रिपाठी न पा लिया था, पर तु यह आभा मुखर्जी।

आज श्री त्रिपाठी सोचकर ही घर से चले हैं कि 'हैलो' तो हो ही जाए। अक्सर आभा मुखर्जी वर्मा की टेबल पर बठती है। वमा खूसट, बुढऊ खस्सी। दात आगे को निकले हुए हैं, गाल पिचके हुए, आखें धसी हुई, बाल खिचडी डाई भी नही करता है। श्री त्रिपाठी ने इस प्रसग म अपन सौंदय की तुलना उससे कर डाली और स्वय को उससे कई गुना सु दर पाया। पर तु इस साले वर्मा मे क्या है कि आभा मुखर्जी उसी के साथ चिपकी रहती है। ऐसे घुल घुल कर बात करती है जसे और वमा, आदमी को स्वय भी सोचना चाहिए। अपनी औकात पहचाननी चाहिए। ऐसे बात करता है जैसे 'विश्व सु दर' का खिताब इसे ही मिला हो और आभा मुखर्जी उस पर अपनी जान छिडकती हो। पर तु आभा मुखर्जी स 'इट्रोडक्शन' के लिए गधे वर्मा का सहारा तो लेना ही पडेगा, यानी गधे को बाप बनाना ही पडेगा।

'हैल्लो ओ ऽ वमा साहेब। क्या बात है, क्या ठाठ हैं? क्यो भई आज कौन-सा परफ्यूम लगाया है कहा बिजली गिरानी है?' श्री त्रिपाठी ने गधे को बाप बनाने की प्रक्रिया मे कहा।

"हैलो त्रिपाठी।" वर्मा के स्वर मे उदासीनता थी जसे कह रहे हो हम तुम्हारे जैसे बेटो को खूब जानते हैं।

वमा आखो से क्लब म कुछ ढूढ़ने का उपक्रम करते हुए त्रिपाठी को बाई पास करने की मुद्रा मे आग बढने लगे। और श्री त्रिपाठी इस खीज म कि लो इम कुत्ते के भी दिन बदल गए हमारी बिल्ली हमसे ही म्याऊ परन्तु विवशता का नाम अहिंमा के अनुसार वर्मा की म्याऊ सुनते हुए 'हृहडो' के लालच म जीभ लपलपाते, हैं [redacted] हैं करते उसके पीछे हो लिए। जिस तरह वर्मा की आखें त्रिपाठी को 'इग्नोर' कर क्लब म कुछ

खोज रही थी, श्री त्रिपाठी समझ गए कि एक लम्बी लडाई लडनी पडेगी। और इससे पहले कि वर्मा को कुछ पता चले उसे सीढी बनाकर त्रिपाठीजी आभा तक पहुच जाओ। इसके लिए जितना गिरना पडे गिरो, वरना बुढाप (?) मे असफलता की वो कालिख पुतेगी कि जवानी का सारा किया-कराया धरा रह जाएगा। और फिर औरत के आगे पुरुष हार जाए पुरुष जिसकी नारी चेरी है, दासी है, भोग्या है। कुछ करो श्री त्रिपाठी, कुछ करो।

"और वर्मा साहब! बाल बच्चे ठीक ठाक है?"

"हा पत्नी भी ठीक है।" वर्मा अपनी टेबल की ओर बढा।

"बढिया भई वर्मा आज तो हम तुम्हारी टेबल पर ही बैठेंगे।" श्री त्रिपाठी ने ढीठ बनकर कह तो दिया परन्तु अन्दर ही अन्दर भयभीत भी हो गए कि कही इस बात पर वर्मा चाटा ही न जड दे। धडकते दिल से विस्फोट की प्रतीक्षा करने लगे। परन्तु शब्दकोश म औपचारिकता भी एक शब्द होती है। इसके कारण व्यक्ति मन मे चाहे गाली दे रहा हो परन्तु मुख पर मधुर मुस्कान चिपकाने को बाधित रहता है। चाय पिलाने की इच्छा न हो फिर भी घर आए व्यक्ति को बार-बार चाय के लिए पूछना है। बेचारा वर्मा औपचारिकता का मारा बोला, "हा हा क्यो नही, बठो। पर त्रिपाठी मैं साफ कह दू कि तुम्ह अपने साथ हम पपलू नहीं खिलाएगे।'

"क्यो भई, ऐसा क्या हो गया वर्माजी?"

"बुरा मत मानना त्रिपाठी," वर्मा ने कुर्सी पर जमते हुए, कहा "देखो त्रिपाठी हम जूए के लिए ताश नही खेलते हैं। हम तो मनोरजन के लिए थोडे-बहुत पैसे इधर उधर कर लेते हैं। और तुम्हें आदत पड गई है जूए की। तुम केवल जीतने के लिए खेलते हो। मिसेज मुखर्जी को भी ज्यादा जूआ पसन्द नही है। ताश में हार-जीत हो तो मजा आता है। यह क्या हुआ कि सिर्फ हारते रहो या जीतते रहो। यू नो त्रिपाठी मिसेज मुखर्जी को यह सब अच्छा नही लगता है। आई थिंक तुम माइंड नहीं करोगे। यू विल अडरस्टैंड मी।"

'ठीक है, वर्मा जसा तुम कहो। मैं केवल तुम लोगो का खेल ही

देखूगा।" त्रिपाठी ने उस ऊट की तरह फिलहाल अपना सर टेंट मे घुमाना उचित समझा जिसने अतत ऊट वाले को ही टेंट से बाहर कर दिया था।

'आइए मिसेज मुखर्जी, आइए ! आप का ही इतजार हो रहा था।" वर्मा आभा मुखर्जी के स्वागत मे उठ गया और कुर्सी की ओर बठने का सकेत करते हुए लगभग ऐसे झुका हुआ था जैसे 'एयर इडिया' का महाराजा।

"हैलो वर्मा। हैलो एवरी बौडी।" आभा मुखर्जी ने मुस्कान बिखेरी और वर्मा तथा त्रिपाठी के बीच की कुर्सी पर बैठ गई।

श्री त्रिपाठी, बेचारे त्रिपाठी। इस समय उनका हृदय धडक धडक कर अपनी उपस्थिति की सूचना दे रहा था। टागें न जाने क्यो काप-सी रही थी। लग रहा था कि जैसे कुछ प्रफुल्लित शब्द बाहर आना चाहते हैं परन्तु आ नही पा रहे हे। इस समय वह अपने चेहरे पर यथासम्भव सौम्यता लाने का प्रयत्न कर रहे थे। अपने को अच्छा-अच्छा सा दिखाने की चेष्टा मे वह अनावश्यक ही मुस्करा रहे थे और उनकी दृष्टि आभा मुखर्जी के अनुग्रह की इच्छा मे निरन्तर उनके इद गिद चक्कर काट रही थी। उन्हे वर्मा पर गुस्सा भी आ रहा था जो उन्ह आभा मुखर्जी से मिलवा नही रहा था, अपितु खुद चपर-चपर बातें किए जा रहा था। इस समय अगर ईश्वर कहता—"वत्स हम तुमसे बहुत प्रसन्न हुए। कहो भक्त त्रिपाठी, क्या मागते हो ?" तो श्री त्रिपाठी एक वरदान के बदले मे वर्मा को यमराज के पास पहुँचा देते। स्वय श्री त्रिपाठी को आभा मुखर्जी से बात करने का साहस नही हो रहा था। कही उसने बात न की तो कितना बडा अपमान होगा सबके बीच। गलत प्रभाव भी तो पड सकता है, सोचेंगी कि मैं उनसे मिलने के लिए लार टपका रहा हू। पहला ही इम्प्रेशन ऐसा पड गया तो फस्ट इम्प्रेशन इज दी लास्ट इम्प्रेशन।

वर्मा ने ताश बाटनी शुरू की तो त्रिपाठी को ताश नही बाटे। इस व्यवहार को श्रीमती मुखर्जी ने लक्षित किया और बोली, 'मिस्टर वर्मा, इनको ताश भी बाटिए। क्या इन्हें खेलना नही आता है कौन हैं ?'

अपने बारे मे ऐसी जिज्ञासा देखकर श्री त्रिपाठी का मन बल्लियों उछल गया। उनको लगा कि यह औरत नही देवी है—सौंदय और उदारता

की देवी। अपनी प्रशंसा आप ही करने को श्री त्रिपाठी ने मुह खोला ही था कि वर्मा बोला, "नही मिसेज मुखर्जी, हम इन्हे अपने साथ नही खिलाएगे। मिस्टर त्रिपाठी जरा दूसरे ढग से खेलते हैं। हम अगर इनके साथ खेले तो वह 'खेल' नही जूआ होकर रह जाएगा। यह सिर्फ जीतने के लिए खेलते हैं। दूसरे को जीतने नही देते। हम लोग तो सिर्फ मनोरजन के लिए खेलते हैं न मिसेज मुखर्जी "

"हाऊ हाऊ आप हर बार जीतते हैं। इतना बढिया खेलते हैं। मिस्टर त्रिपाठी, मुझे तो बिल्कुल ही नही आता है। मेरा बडा लडका जब स्टेटस मे आता है तो वह हर बार मुझे हरा देता है और कहता है कि मम्मी तुम कोई 'कोच' रख लो। श्री त्रिपाठी, आप मुझे 'हेल्प' करेंगे। प्लीज मुझे कुछ सिखा दीजिए।" आभा मुखर्जी ने मारक मुस्कान श्री त्रिपाठी के आगे बिखेरते हुए कहा।

श्री त्रिपाठी को लगा कि हृदय मे वसन्त छा गया है। वह इन्द्र बने बैठे हैं और अप्सराए मधुर स्वर मे गीत गा रही है। चादनी खिली हुई है और वह आभा मुखर्जी के हाथो मे हाथ डाले युगल गान गाते हुए चले जा रहे हैं। आकाश से फूल बरस रहे हैं। और देवता भी इस दृश्य को देख कर तरसते हुए कह रहे हैं कि हम क्यो न त्रिपाठी हुए। बस अब कोई इच्छा नही है, न द्वन्द्व है, न कोई विकार। सच ईश्वर यही है और अब भी छप्पर फाडता है। बेचारा वर्मा, उसने देखा ऊट पूरे घर मे समा गया है, और वह विवश सा बाहर जा रहा है। पर इस तरह वर्मा ऊट को जमने नही देगा। उसकी करवट बदल देगा। आज वर्मा पूरे दिलो दिमाग से 'पपलू' खेलेगा और जीतेगा। त्रिपाठी को 'नीचा' दिखाने का इससे अच्छा अवसर फिर कभी नहीं मिलेगा।

"यस मिसेज मुखर्जी, आप जैसी सुन्दरी की सहायता करके मुझे प्रसन्नता होगी। आप देखती जाए, मैं आपको इस क्लब का चेम्पियन बना दूगा। वर्मा जैसे आपके सामने पानी भरेंगे।" त्रिपाठी का आत्मविश्वास लौट आया था। उन्होंने अपनी कुर्सी मिसेज मुखर्जी के ओर ५ दी।

ताश बटे खेल आरम्भ हुआ। पहले श्री त्रिपाठी दूर से

ओर सकेत करके उठाने और फेंकने के लिए कहने लगे, फिर पास सरक आए। और फिर अगुली का स्पश हुआ। एक करेंट सा सारे शरीर म (श्री त्रिपाठी के) दौड गया। मस्तिष्क शू य हो गया, हृदय मे ज्वार उठ आया। ब्लड प्रेशर हाई हो गया। मस्ती के झोंके स्पश सुख को अनुभव करने मे डूबने लगे। अब श्री त्रिपाठी की आखें ताश के पत्ते नही देख रही थी, त्वचा स्पश सुख अनुभव कर रही थी। श्री त्रिपाठी ने आज तक ऐसा अनुभव नही किया था। पत्नी के सम्पूण शरीर से वह रोमाच नही मिलता था। मिला था, जो आभा मुखर्जी की एक अगुली से इस समय मिल रहा था।

श्री त्रिपाठी का नशा तब टूटा जब श्रीमती आभा मुखर्जी ने कहा, "हाय, मैं हार गई। इतने सारे 'पाइटस'। आप तो मुझे जितवा रहे थे। मिस्टर त्रिपाठी! यह क्या हुआ? इससे अच्छा तो मैं खुद ही खेल लेती हू। इतने पाइट्स मैंने आज तक नही दिये।" श्री त्रिपाठी ने यह 'विलाप' सुना तो सकते मे आ गए। आसमान से गिरकर खजूर मे अटके बिना धरती सूघ गए। जीवन मे पहली बार 'पपलू' म इतनी बुरी हार। क्या सोचेंगी आभा मुखर्जी? क्या 'इम्प्रेशन' पडा है? बचने के लिए बगलें भाकने लगे और झेंप मिटाने के लिए बहाना ढूढने लगे। वर्मा की विजयी मुस्कान उनके दिल पर छुरिया चला रही थी।

"मिसेज मुखर्जी, आज जरा ध्यान भटक गया। लाइए मैं आपकी तरफ से खेलता हू।' कहकर श्री त्रिपाठी ने गड्डी हाथ मे पकड ली।

"आप लोग ही खेलिये मुझे आज जरा जल्दी जाना है। मेरे हस्बड टूर मे लौट रहे हैं। तीन चार दिन रहेंगे फिर चले जाएगे। सोचती हू, उनको कम्पनी दे दू, और थोडी बहुत शापिंग भी कर लू। ओके, बाय, बाय।" श्रीमती आभा मुखर्जी ने उठते हुए कहा।

श्रीमती आभा मुखर्जी क्या गईं श्री त्रिपाठी के हृदय का सारा उत्साह समाप्त हो गया। जिस ताश की गड्डी को उन्होने बडे उत्साह से पकडा था उसे एक उदासीनता के साथ मेज पर रख दिया। अब जीतने से क्या लाभ? किसके लिए जीतें श्री त्रिपाठी? सारा क्लब सूना-सूना सा लगने लगा। श्री त्रिपाठी वस सिगरेट नही पीते हैं, पर ऐसे अवसरो पर मागकर

एकआध सिगरेट पी लेते हैं जब जीवन निरथक लगने लगता है।

"क्या बात है त्रिपाठी, हमारे साथ 'फ्लश' नहीं खेलोगे।" वर्मा का स्वर व्यंग्यात्मक था। श्री त्रिपाठी नही चाहते थे कि इन लोगों को कुछ शक भी हो कि श्रीमती मुखर्जी के लिए उनके मन में कुछ है। यह सब मिडिल क्लास की मटेलिटी के लोग हैं ऐसे ही बात को ले उडेंगे और फिर न जाने बात कहा कहा पहुचे। बेटे हैं, बहुएं हैं, एक बेटी ब्याहने योग्य है। भारत का समाज अभी बहुत पिछडा हुआ है, 'फ्रेंडशिप' की बात यहां के लोगो के मन मे नही उतरेगी। इसलिए आभा मुखर्जी के अभाव के कारण हुई उदासीनता दूर हटाते हुए श्री त्रिपाठी मुस्करा कर बोले, "क्यों नहीं, वो चली गई तो क्या खेल नही होगा।"

'यस, दैटस दी स्प्रिट,' वर्मा ने मुस्कराकर कहा।

खेल आरम्भ हो गया परन्तु श्री त्रिपाठी का मन हारता तो लगता। तरह-तरह के जोड-तोड वह अन्दर ही अन्दर जोड रहे थे। अब तो बस एक ही इच्छा थी, आभा मुखर्जी से प्रेम-सम्बन्ध। इस इच्छा मे श्री त्रिपाठी 'फ्लश' मे हारना शुरू हुए तो हारते रहे। उन्हे इस बात पर खीज तो आई पर सोचा हारना ही ठीक है। कभी कभी जीवन मे बडी बाजी जीतने के लिए हारना भी आवश्यक होता है। अगर नही हारा तो कल से ये लोग अपनी टेबल पर नही बैठाएगे। मनुष्य कितना चतुर है, वह अपनी असफलता को भी कैसे सफलता मे बदल लेता है।

आभा मुखर्जी अब तीन दिन बाद क्लब लौटेंगी। तीन दिन! श्री त्रिपाठी को पहली बार अनुभव हुआ कि कुछ परिस्थितियो मे तीन दिन, तीन दिन नही होते महीने हो जाते हैं। इसके हस्बैंड को भी अभी दूर से आना था। जरामा जरामा बातचीत शुरू हुई थी, थोडा अपनापन बढ जाता, पर अब तो फिर शुरू करना पडेगा। और यह तीन दिन कैसे कटेंगे।

उस रात श्री त्रिपाठी ने क्लब से लौटकर खाना नही खाया। बहाना मार दिया कि आज क्लब मे पार्टी थी। आभा मुखर्जी के विरह मे एक रात का खाना ता श्री त्रिपाठी छोड ही सकते थे। वह चाहते थे कि आज उन्हे कोई रोके टोके नही। वह आभा मुखर्जी के स्पर्श सुख स मिले आनन्द

मे खो जाना चाहते थे। वह जल्दी से जल्दी अकेलेपन मे यादो के सहारे आभा मुखर्जी को लौटा लेना चाहते थे। वह प्रेम गाडी को आगे चलाने के लिए योजनाए बनाना चाहते थे। अत श्री त्रिपाठी ने रात का खाना नही खाया।

तीन दिन, तीन रात। कसे कटेगा यह समय ? क्या प्रतीक्षा मे जीवन के अनमोल क्षण खो दिए जाए ? नहीं, श्री त्रिपाठी आभा मुखर्जी को जी जान से ढूढेंगे। छोटी सी इस 'दिल्ली' म कही तो आभा मुखर्जी टकरा ही जाएगी। वह नही टकराएगी तो श्री त्रिपाठी उनका घर खोज कर स्वय टकराएगे। और जब वो टकराएगी श्री त्रिपाठी तारों भरी रात मे दिवास्वप्न लेने लगते हैं

वह आभा मुखर्जी के घर क आस पास इस मुद्रा मे घूम रहे हैं कि किसी आवश्यक काम से कही जा रहे हो। कनखियो से याचना भरी दृष्टि इधर उधर डालकर दिल चाह रहा है कि कस भी आभा मुखर्जी टकरा जाए। मन सभी देवताओ का स्मरण कर रहा है, कई भगवानो के मदिर मे सवा पाच रुपये का परसाद चढाने का निश्चय कर रहा है। श्रीमती आभा मुखर्जी के घर का दरवाजा खुलता है, श्री त्रिपाठी की धडकनें बढती हैं। कोई बाहर आता है। आह' आभा मुखर्जी दिल बाहर निकला कि निकला। श्री त्रिपाठी तीव्रता से आभा मुखर्जी, के घर स दस गज पीछे की ओर भागते हैं और फिर धीरे धीरे इस मुद्रा मे चलने लगते हैं कि हमे पता नही है कि आप यहा रहती हैं। हम तो अपने काम से जा रहे हैं।

"अरे मिसेज मुखर्जी आप, आप यहा कसे ?"

' मेरा तो घर है वो सामने आप कैसे ?'

"मैं मैं वो एक जरूरी काम से यहा आया था।'

"जरूरी काम से ! किस काम से, कहा आए हैं ?"

"बस वो बस ऐसे ही एक काम से। बहुत जरूरी काम स आया था, यही इधर ही। कैसी हैं आप ?'

"अच्छी हू। आपको बहुत जल्दी नही हो तो थोडी देर बठते हमारे यहा। आज तो मेरे हस्बेंड भी घर मे हैं।"

"नही, ऐसा कोई जरूरी काम नही है। आपके क्लब से तो मैं जरूर मिलूगा।"

श्रीमती आभा मुखर्जी त्रिपाठी को घर ले जा रही हैं। स्वग है और यही है तथा उसे श्री त्रिपाठी अनुभव भी कर रहे है। आभा मुखर्जी चाय पिलाती हैं और अपने 'पति' को बतलाती हैं कि श्री त्रिपाठी 'पपल' के कितने अच्छे खिलाडी हैं। श्री पतिदेव त्रिपाठी से आग्रह करते हैं कि वह आभा मुखर्जी को रोज एक घटा 'पपलू' ही सिखा दिया करें। हाय !

श्री त्रिपाठी के ताश का महल ढह जाता है। वह अपने को घर मे पत्नी के सम्मुख पाते हैं जो हाथ मे दूध का गिलास लिए खडी है।

"क्या बात है, किस चिन्ता मे खोए हुए हो। देखती ▮ कुछ दिनो से तुम रात को ठीक से सो नही पाते हो। काम्पोज ले लो दूध के साथ।" पत्नी ने बडे प्यार से कहा। परन्तु यह प्यार श्री त्रिपाठी का अपने कल्पना लोक के गुब्बार मे सुई सा चुभा। वह जल्दी से जल्दी टरकाकर फिर अपने कल्पना लोक मे खो जाना चाहते थे।

"नही, ऐसी कोई बात नही है मैं ठीक हू "

"मैं जानती नही हू क्या ? आपको बिटटो के ब्याह की चिन्ता रहती है। मैं आपका स्वभाव नही जानती क्या ? पर, सुनो चिन्ता से क्या होगा। करने वाला तो ऊपर है। जब जो होना है, जैसा सजोग मिले होगे, वैसा ही तो होगा। तुम मत चिन्ता किया करो जी !"

श्री त्रिपाठी को सुनकर अच्छा लगा। उन्होने सोचा पत्नी का यह भ्रम बना रहे तो अच्छा है वरना प्रेम के कल्पना लोक मे वह ऐसे ही अपनी टाग अडाती रहेगी। और फिर इस बात को स्वीकार कर वह जिम्मेदार पति की भूमिका भी अदा कर सकते हैं।

'चिन्ता तो करनी पडती है, भाग्यवान। भगवान पर तो सब कुछ छोडा नही जाता। स्वय भी तो हाथ पैर हिलाने पडते हैं। पर तुम चिंता मत करना। तुम सो जाया करो। खैर, आज तो मुझे गहरी नीद आ रही है। तुम भी सो जाओ।"

श्री त्रिपाठी ने पत्नी को बहलाया और उसके जाते ही कल्पना लोक मे अपने को बहलाने लगे।

अब किसी तरह आभा के घर का पता चल जाए तो बात बने। पर पूछें किससे श्री त्रिपाठी ? यमा को पता है परन्तु उससे पूछना अपने-आपको बदनामी के कुए म ढकेलना है। दस जगह बात करेगा और कोई आश्चर्य नही कि परिवार म भी लोगो से मजाक मजाक म नमक मिर्च लगाकर कह दे अब तक श्री त्रिपाठी का विचार था कि खलनायक केवल फिल्मो म होते हैं, उनका हमारे जीवन से कोई सम्बन्ध नही होता है परन्तु इस घटना से उनका विचार बदल गया है। श्री त्रिपाठी को विश्वास हो गया है कि खलनायक हमारे जीवन मे भी हो सकते हैं और उनका हमारे जीवन स गहरा सम्बन्ध होता है।

अब इस ईश्वर की कृपा कहिए कि श्री त्रिपाठी के परिश्रम का फल, एक दिन उन्हें बाजार मे श्रीमती मुखर्जी मिल गई और वह भी अकेली। उनके पति ने उन्ह मिलने का समय दिया था और अभी पहुचे नही थे। श्री त्रिपाठी को देखकर वह मुस्कराईं तो वह नन्दन कानन मे पहुच गए। पति की प्रतीक्षा मे पहले तो वह अपने इग्लड और अमेरिका गए बेटों के बारे म धारा प्रवाह बोलती गईं और फिर श्री त्रिपाठी से यह पूछकर कि उनके बेटे विदेशो मे कहा कहा हैं, उन्हें हीन भावना से ग्रस्त करने लगी। काश ! श्री त्रिपाठी ने अपनी जमा पूजी लगाकर एक बेटे को ही विदेश भेज दिया होता तो आज यह नाक नही कटती। बेचारे चुपचाप इस अपमान को पीते रहे। श्रीमती मुखर्जी ने किसी रेस्तरा म चाय के लिए आमन्त्रित किया तो श्री त्रिपाठी को अचानक कोई काम याद आ गया। काम क्या, बस बहाना था। अचानक मिल इस निमन्त्रण पर वह एकदम हडबडा उठे थे।

चाहे कुछ भी हुआ हो श्री त्रिपाठी को एक बात का पूर्णत विश्वास हो गया कि श्रीमती आभा मुखर्जी उनको चाहती हैं। बस अब वह किसी भी दिन अपना प्रेम निवेदन कर ही देंगे। पर यह निवेदन कैसे हो ? सीधे वह दें कि 'आई लव यू । श्री त्रिपाठी यह भारत है। श्रीमती मुखर्जी के लडके चाहे विदेशो म रहते हो परन्तु वह खुद शुद्ध बगालन हैं। और फिर अपनी उम्र तो देखिए। जवानी मे करते तो लोग उम्र का तकाजा मान लेते पर इस उम्र मे कही ऊच-नीच हो गई तो वो मट्टी उडेगी, वो मिट्टी

पलीत होगी कि मुह दिखाने लायक न रहोगे। पत्नी क्या कहेगी, बेटे क्या कहेगे, बेटो की बहुए क्या कहेगी। और फिर यह 'जालिम समाज'।

छोड दू यह सब लफडा। मान लू हार। इस बात को श्री त्रिपाठी का दिल कतई स्वीकार करने को तैयार न था। एक बार कदम बढाया तो वह मर्द का बच्चा ही क्या जो उसे पीछे उठा ले। आज क्लब में क्या न किसी रैस्तरा मे चाय के लिए निमत्रण दे दू। किसी ने देख लिया तो? यहा कौन से लौंडे लपाडे है, इज्जतदार लगते हैं। किसी को क्या पता मेरे साथ कौन है? इस उम्र म यही तो लाभ है, कोई शक नही करगा। पर क्या मिसेज मुखर्जी मान जाएगी? कैसे कहूगा? सीधे चाय के लिए कह दू। क्यो न अपने जन्म दिन का बहाना बना दू। यह ठीक रहेगा।

"हैलो मिसेज मुखर्जी, कैसी हैं?" श्री त्रिपाठी ने आभा मुखर्जी को क्लब म प्रवेश करने से पहले दरवाजे पर पकड लिया।

"फाइन, आप कसे है?"

"अच्छा हू, और आपको देखकर तो वैसे ही तबीयत खिल उठती है।" श्री त्रिपाठी न बडे साहस के साथ रोमाटिक होते हुए कहा।

"अच्छा! अह हा यू नॉटी" थोडा सा हसकर आभा मुखर्जी ने कहा तो श्री त्रिपाठी के हृदय की बगिया खिल गई।

"कल मेरा जन्म दिन है, मेरी इच्छा है कि आप मेरे साथ चाय पिए।" श्री त्रिपाठी ने हकलाकर कह तो दिया परन्तु विस्फोट की प्रतीक्षा भी करने लगे।

"ओह! कांग्रेच्यूलेशस, ह्वाई नाट! कहा पिलाएगे चाय?"

श्री त्रिपाठी की झोली सितारो से भर गई। धरती पर स्वर्ग उतर आया। ईश्वर ने छप्पर फाड दिया। मन मयूर नाच उठा। ब्लड प्रेशर फिर हाई हो गया।

बुढापे म नीद वसे ही नही आती थी, उस रात तो वो बरस हो गई। श्री त्रिपाठी सारी रात करवटें बदलते रहे। पत्नी ने टोका, "क्यो जी, तबीयत ठीक नही है।' बेटे ने कहा, "पापा, रात का कम खाया करो।' और दिल ने कहा, 'त्रिपाठी, बाबू, सब बकवास करते है। मजे कर जाओ। सोच लो जो योजना बनानी है। (सोच लो) जो कल कहना है।

फिर यह दिन नहीं आएगा। अपने मन की एक-एक बात कह डालना। कल चूक गए तो गई मिसेज मुखर्जी हाथ से। फिर टापते रहना।"

योजनाएं बनने लगी, रात बीतने लगी, सुबह होने को हुई तो आख लग गई।

श्री त्रिपाठी बेसब्री मे शाम की प्रतीक्षा करने लगे। शाम को 'स्टडड' मे आभा मुखर्जी मिलेगी और श्री त्रिपाठी उनके सामने अपने दर्दे दिल का हाल बयान करेंगे। कैसे करेंगे? अभिव्यक्ति के इस सकट के लिए श्री त्रिपाठी कई 'आइडियाज' सोच चुके हैं। जसे कोई काल्पनिक प्रेम-कहानी आरम्भ करेंगे और बीच मे अपना प्रेम निवेदन कर देंगे। या फिर आभा मुखर्जी के सौंदय की प्रशसा करेंगे और अपन हृदय के आकर्षण को कह देंगे। अथवा बदले हुए माडन जमाने की प्रशसा करेंगे, स्त्री-पुरुष की मित्रता पर बल देते हुए अपनी बात कह देंगे। या जब आभा मुखर्जी 'हैप्पी बर्थडे' कहते हुए प्रेजट देंगी, तब श्री त्रिपाठी उसके हाथो को अपने हाथो मे लेकर नशीली आखो से निहारेंगे और बहुत ही मधुर आवाज मे 'यदस माई लव' कहेंगे। पर इतना साहस क्या वह बटार पाएगे? साहस तो करना ही पडेगा श्री त्रिपाठी वरना अकेलेपन का यह सुनहरी अवसर निकल जाएगा। पर अगर आभा मुखर्जी प्रेजेण्ट न लाई तो? सारा सोचा सुचाया धरा रह जाएगा।

शाम होते होते श्री त्रिपाठी 'स्टडड' मे पहुच गए—समय से एक घटा पहले। वो किसी भी प्रकार का रिस्क नहीं लेना चाहते थे। और फिर जो कुछ आज होना था उसके लिए श्री त्रिपाठी को अपने आपको तैयार भी करना था। श्री त्रिपाठी की चाल किसी गजगामिनी महिला से कम नहा थी। वह एक नशे मे लहराते हुए से चल रहे थे। ओठो पर रहस्यात्मक मुस्कराहट थी। अनात नशे म डूबी हुई आखों को सारा ससार हरा हरा दिखाई दे रहा था। लब्बो-लुबाब यह कि श्री त्रिपाठी अपने को जितना हो सके रोमाटिक दिखाने और बनान मे प्रयत्नशील थे। उन्होंने रेस्तरा म एक कोने की मज खाली और बठ गए।

श्री त्रिपाठी की आखें दरवाजे पर लगी थी। मस्तिष्क आभा मुखर्जी क सामन स्वय को अभिव्यक्त करने की योजना बना रहा था, हाथ प्रतीक्षा

मे चाय तैयार कर रहे थे और दिल समय की माला के प्रत्येक क्षण के मनको को फेरता हुआ एक ही नाम जप रहा था—आभा ! कितना प्यारा नाम है।

परन्तु तभी श्री त्रिपाठी चौंके। उन्होंने रेस्तरा के दरवाजे पर जो देखा उसे देखकर वह सकपका गए। जी नही, न ही अपने पति के साथ आभा मुखर्जी थी और न ही विलेन —वर्मा था बल्कि दरवाजे पर श्री त्रिपाठी के सुपुत्र सुनील अपनी गर्ल फ्रेंड के साथ उपस्थित थे। सुपुत्र जी रेस्तरा म खाली मेज ढूढ रहे थे। यह यहा कैसे आ गया ? श्री त्रिपाठी घबराए। तो जनाब आजकल यह 'रिसर्च' कर रहे हैं ? आजकल रोज जो पुस्तकें खरीदने के नाम पर पैसे खर्च किए जाते है, वो इस पुस्तक पर खर्च किए जा रहे हैं। तभी लाट साहए प्रैक्टिकल के बहाने देर रात गए घर आते हैं। यह प्रैक्टिकल हो रहा है। श्री त्रिपाठी का मन हुआ कि अभी उठें और उठकर एक चाटा धर दें। पर‍न्तु अगर सुनील ने पूछा कि वह यहा क्या कर रहे हैं तो क्या जवाब देंगे ? आजकल की सतान तो है ही ऐसी, बाप से सवाल जवाब करती है। छोडो श्री त्रिपाठी, क्यो अपना मूड खराब करते हो, घर चलकर देख लेना। श्री त्रिपाठी ने मन मसोसा और सर झुकाकर चाय पीने लगे। मूड खराब तो हुआ ही।

अब पता नही सुनील को कोई खाली सीट नही मिली या उसने श्री त्रिपाठी को देख लिया, दोनो रेस्तरा मे नही बठे। इस पर श्री त्रिपाठी को जो सास आई वह राहत की सास थी।

थोडी देर बाद दरवाजे पर आभा मुखर्जी दिखाई दे गई, वह श्री त्रिपाठी की तलाश मे इधर उधर अपनी प्यारी आखें घुमा रही थी। श्री त्रिपाठी ने बुलाने के अदाज म दो-तीन बार हाथ हिलाया भी पर‍न्तु उसे आभा मुखर्जी देख नही पाई। देखा भी तो एक वेटर ने, वह आ गया। श्री त्रिपाठी जब तक वेटर को कुछ कहते, आभा मुखर्जी ने श्री त्रिपाठी को देख लिया और मुस्कराती हुई मेज की ओर चल दी। श्री त्रिपाठी स्वागत म उठे कुछ लडखडाये और फिर बैठ गए। साहस कर फिर उठे, मेजपोश खिच गया शीशे का गिलास और चाय के बर्तन फर्श पर गिर गए। सारे रेस्तरा का ध्यान खिच गया। श्री त्रिपाठी के चेहरे पर रोमास की जगह

क्षमा का भाव आ गया।

"और कोई नही आया ?"

"बठिए, मैंने सिर्फ आपको इन्वाइट किया था।'

"तो, दिस इज वैरी बैड। बथ-डे ऐसे थोडी मनाया जाता है। चलिए क्लब का टाइम हो गया है, आज क्लब मे आपका बथ-डे सैलिब्रेट करेंगे।"

"कुछ देर तो बैठिए मिसेज मुखर्जी कुछ चाय वाय हो जाए।'

"आह ना, चलिए उठिए। क्लब चलते [illegible]।"

आभा मुखर्जी ने श्री त्रिपाठी को हाथ से पकडकर उठाते हुए कहा। श्री त्रिपाठी के शरीर में करेंट दौड गया। कितना मनमोहक स्पर्श था। श्री त्रिपाठी समझ गए कि क्यो वह रेस्तरा से बाहर जाने की बात कह रही है। भई अच्छे घरो के लाग हैं, किसी ने देख लिया तो ! अभी सुनील ही आ गया था। श्री त्रिपाठी को इतनी सी बात समझ नही आई। हाय कितनी अच्छी है मिसेज मुखर्जी।

कनाट प्लेस के बरामदो मे क्लब की ओर चलते हुए श्री त्रिपाठी का कई बार मन हुआ कि श्रीमती आभा मुखर्जी का प्यार से हाथ थाम और उसे झुलाते हुए आगे बढें। एक दो बार चलते चलते हाथ को टकराया भी। श्रीमती आभा मुखर्जी ने कुछ नही कहा कहती भी क्या। श्री त्रिपाठी मौका है, हाथ पकड लो। श्री त्रिपाठी ने हाथ पकड लिया, और उसे प्यार से दबा भी दिया।

श्रीमती आभा मुखर्जी ने रुककर घूरते हुए श्री त्रिपाठी की ओर देखा। श्री त्रिपाठी के चेहरे पर आश्चयजनक भय से युक्त बेचारा-सा रोमास तैर रहा था। देखें क्या होता है का भाव था। श्रीमती मुखर्जी ने जोर से हाथ झटका, बोली—"व्हाट आर यू डूइग मिस्टर त्रिपाठी। डाट यू नो हाउ टू विहव। यह क्या तरीका है ? आराम से चलिए।'

श्री त्रिपाठी की बगिया उजड गई। आभा मुखर्जी दुर्गा माता के रूप म दिखाई देने लगी। श्री त्रिपाठी ने बगलें झाकी, सॉरी कहा और सर झुका कर चलने लगे।

उह अपने को समझती क्या है ? बस क्लब जाती है, माडन बनती है, हाथ पकड लिया तो तूफान उठा लिया। और वो तो हमने सोचा कि इसका

दिल बहला दें, पति टूर पर रहता है, वरना यहा कौन घास डालता है। हमारी भी इज्जत है। सोचती होगी गुस्सा दिखाकर ब्लैक मेल कर लेगी। अरे जब ऐसी-वैसी बात नही थी तो रेस्तरा मे क्या करने आई थी, घर आने को क्यो कहा था ? खूब समझता हू इन लोगो को। ऐसी औरतो की नजर तो मरदो के पर्स पर रहती है। साफ-साफ बच गया मैं। शुक्रिया भगवान तेरा लाख-लाख शुक्रिया।

और उस दिन क्लब से पहली बार घर जल्दी पहुंचकर श्री त्रिपाठी ने अपने 'सुपुत्र' सुनील की खूब खबर ली। पेट भर खाना खाया, जी भर पत्नी को डाटा।

आराम में राम छिपा है

कभी आप आराम से मुह ढक्कर पडे हैं ? क्या आपने आराम के ऐसे क्षणो मे मिलने वाले सुख का अनुभव किया है ? क्या आपने आराम के कारण मिलने वाले ब्रह्मानन्द सहोदर का आनन्द उठाया है ? यदि नही तो इस लेख को पढ़ने के बाद, तुरत आराम से मुह ढक्कर पड जाएगा, देखिएगा कैसा आध्यात्मिक आनन्द मिलता है। न पत्नी का मोह है, न बच्चो की माया है, न बास का क्रोध है और न बैंक बैलेंस का अहकार है। व्यक्ति का मोह और अहकार तो तभी जागता है जब उसकी आख और उसके कान खुले रहते हैं। परायी चूपडी दीखती है तो जीभ जलेबी बन जाती है। अपने महल के सामने खडी झोपडी को देखकर वीरो की छाती चौडी हो जाती है और दिमाग सकुचित। मस्तक अहकार मे आसमान पर थूकने लगता है। यह दीगर बात है कि उस थूक को अपने मुह से स्वय ही साफ करना पडता है। कान खुले हो तो पत्नी और बच्चा की फरमाईशें क्रोध जगाती हैं, बास की डाट क्रोध की ऐसी प्रसव पीडा को जन्म देती है, जिसम पीडा तो होती है परन्तु प्रसव नही होता।

अनादि काल से हमारे ऋषि मुनि कहते आ रहे हैं कि जीव काम, क्रोध, मोह अहकार मे फसा हुआ, इस सारा ससार मे भटकता रहता है। उसे ईश्वर नही मिलता है। जीव भटके नही इसलिए हमारे ऋषि मुनि भटकते रहें। कभी गुफा के अन्दर भटके और कभी वट वृक्ष के नीचे। भटकने के बाद जब आराम से बैठे तो उन्हें राम मिल गया। तो हे सतो! राम म ही आराम है। मुह ढककर आराम से सो जाइए, जीव तो क्या उसकी अम्मा तक नही भटकेगी।

जो आरामद्रोही है, वह राम को सपने मे भी नही पा सकता। उसका जीव वेड-टी की अखबार से लेकर देर रात आकाशवाणी के समाचारो तक निरतर भटकता रहता है। वह क्रोधित होता है पीडित होता है और

विवशता मे हाथ-पैर पटकता है। आरामद्रोही सुबह का अखबार पढता है। निमम हत्याओ, चोरी-डकैती और भ्रष्टाचार के पनपते राक्षस को देखकर उसका खून खौलने लगता है। वह अपने आपको बौना महसूसने लगता है। वह राम को पुकारता है, परन्तु राम कहा! राम तो आराम भक्त सपनो में विचरण कर रहे हैं।

आराम-भक्त दोपहर को सुबह मानकर आराम से उठता है। सरदी हो तो रजाई मे दुबका रहता है, और गरमी हो तो कूलर की ठडी हवा का आनन्द उठाता है। बरसात म रिमझिम का आनन्द उठाता है। परौठो का पेट भर दोपहरी नाश्ता करता है और भोजन की प्रतीक्षा मे मुह ढककर आराम की शरण म चला जाता है। सुबह की अखबार न आकाशवाणी के समाचार। कहा है हत्या, चोरी-डकैती और भ्रष्टाचार का राक्षस! आराम-भक्त ने राम का पुकारा नही परन्तु आराम मे छिपी राम शक्ति ने उसके सारे कष्टो का निद्रा के बाण से सहार कर दिया।

जो आराम करता है उसे राम मिलता है और आराम नही करता है वह सासारिक, तुच्छ माया मोह के पीछे भटकता रहता है वह दो चार और चार का आठ करने के लिए नियानवे के फेर मे पडा रहता है। उसे राम नही मिलते हैं, लक्ष्मी मिलती हैं। लक्ष्मी जो स्वय राम के श्रीचरणो म पडी रहती है। अत पूजीपति ऋषियो का कथन है कि जीव को आराम की शरण मे उस राम का ध्यान करना चाहिए जिसके चरणो मे लक्ष्मी पडी है। उसे लक्ष्मी प्राप्त करने की इच्छा म भटकना नही चाहिए, अपने आराम मे बाधा नही पहुचानी चाहिए।

तो, हे पाठको! आराम की महिमा महान है। जिसे यह नही मिलता है वह भटकता रहता है और जिसे मिल जाता है, वह भवसागर तक पार कर जाता है। आराम तो देवता है जिसको पूजने से सुख चन की वर्षा होती है। राम की असीम अनुकम्पा होती है। आराम-भक्त को न राशन की चिंता व्यापती है, न प्रमोशन का दुख सलता है, राम की कृपा से उसके सारे दुख स्वत दूर होते हैं। परन्तु आरामद्रोही को न दिन मे चन है न रात को आराम है। वह अपने सुख चन का दुश्मन तो होता ही है दूसरो के सुख-चन को भी छीनता है।

हे पाठको ! आपको आराम पर श्रद्धा हो अत मैं दो सत्य-कथाए आपके समक्ष कहता हू । इस कथा को कहने-सुनने से आराम-देवता के प्रति मन मे श्रद्धा का भाव जागता है और सारे दुख कष्ट दूर होते हैं । मन बार बार आराम की चाह करने लगता है । बैठे बठे आखें मुदने लगती हैं और मन पलग पर लेटने का सुख पाना चाहता है । ऐसे म मन को एकाग्रचित रखकर यह कथा सुनिए ।

सावधान सिंह नामक जीव अत्यधिक दुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करता था । सावधानियो के कारण उसका जीवन हर समय सावधान की मुद्रा म दिखाई देता था । उसकी इच्छा थी कि उसके पास अच्छा मकान हो, एअरकडीशड कार हो और सुदर पत्नी हो । वह नगर मे निर्मित ऊची-ऊची इमारतो को देख देखकर इच्छा के दुख से पीडित होता था । वह निरतर काम मे डूबा रहता है ऊचा उठने के लिए कडा श्रम करता रहता । वह फूक फूक कर कदम रखता परन्तु उसका जीवन जल रहा था ।

एक दिवस की बात है, सावधानसिंह को एक बडा सरकारी ठेका मिलने की आशा बधी, परन्तु इस सुखद आशा मे एक आराम भक्त अफसर —विश्रामकुमार बाधा बन रहा था । विश्राम कुमार हर समय आराम की सुखदायक मुद्रा म रहता, अत कार्यालय सम्बन्धी काय तुच्छ काय उसकी दृष्टि के प्यासे रहते । सावधान सिंह को लगा कि ऐस मे चिडिया खेत चुरा सकती हैं और ठेका कोई और चुरा सकता है । खेत को चिडियो से बचाने के लिए अफसर रूपी श्रीराम की अचना-पूजा आवश्यक थी । अत सावधान सिंह बडी सावधानी से विश्राम कुमार के घर जा पहुचे । साहब आराम कर रहे थे ।

सावधान सिंह ने नौकर से कहा, "साहब को जगा दो न ।" सुनते ही नौकर के चेहरे पर तीसरे विश्व-युद्ध का आतक छा गया बोला, ' न बाबा मुझे मरना है क्या ?"

"मुझे बहुत आवश्यक काम है प्लीज जगा दो ।" सावधानसिंह गिड-गिडाया ।

' साहब के आराम मे जरूरी कुछ नहीं है । नौकर बडबडाया ।

सावधान सिंह स्वर में मास्सन भाव लाया और बोला, "तुम समझते

क्या नहीं हो। साहब सोये रहे तो मेरा भाग्य भी सो जाएगा, जाग गये तो सब कुछ मिल जाएगा।"

यह सुनते ही नौकर मुस्कराया, "जाग गये तो सब कुछ जा भी सकता है। खैर, मुझे क्या मिलेगा अक्लमदजी ?"

सावधानसिंह को इशारा काफी था, उसने दो हरे नोट नौकर को दिखा दिए।

नोट और वो भी हरे नोट, भाई के द्वारा भाई के लिए भाई की हत्या तक करवा सकते हैं, यहा तो केवल जगाने का अपराध करना था। नौकर ने ऐसे समय मे विश्राम कुमार को जगा दिया जब वे घोर विश्राम की मुद्रा मे थे। धरती कापने लगी, आकाश थरथराने लगा और घर मे प्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया।

सावधान सिंह को उसका राम नही मिला और नौकर को हरे नोट नही मिले, वह पिटा अलग।

अब मैं वह कथा कहता हू कि आराम मे राम कैसे मिलता है।

भ्रष्टनगर मे एक जीव रहता था। उसका एकमात्र लक्ष्य था, आराम भरा जीवन व्यतीत करना। इस महत्वपूर्ण देव दुर्लभ आरामदायक जीवन की प्राप्ति करने के लिए उसने चोरी, डकैती, हत्या जैसा कठोर तप किया और अपने पद का लाभ उठाते हुए उसने भ्रष्टाचार को पनपने का पूर्ण अवसर प्रदान किया।,पुलिस विभाग म कार्यरत ये समाजसेवी दिनो दिन फलने फूलने लगे, जो जालिम जमाने की निगाहो मे खटकता था। जमाना उसके लिए नरक के द्वार खोलने को उत्सुक था। परन्तु वह आराम प्रेमी जीव अब चौबीस घटों मुह ढक कर पडा रहता। अपनी कठिन तपस्या से उसने इतना पुण्य-धन एकत्रित कर लिया था कि अब उसे अगुलिया तक हिलाने की आवश्यकता नही पडती थी।

आराम से लगाव होने के कारण उसने अपने छोटे बेटे का नाम 'आराम रख छोडा था। उस अपने बेटे से बहुत लगाव और आशाए थी। जहा अ ॥ बेटे पिता की सपत्ति मे निरन्तर वद्धि की चिंता मे व्यस्त रहते वहा छोटा पुत्र आराम पिता के साथ सुख चैन की बासुरी बजाता, आराम से मुह ढककर पडा रहता।

एक दिन उस आरामप्रेमी का अंत समय आ पहुंचा। उस समय उसके पास कोई नहीं था और यमदूत उसके पास थे। उसने छोटे पुत्र को अंतिम पुकार लगाई—आराम! और चमत्कार देखिए राम आ गये, उसे अपने साथ बैकुंठ ले गये। उस पापी का आराम शब्द ने उद्धार कर दिया।

देखी आपने आराम शब्द की महिमा। जो शब्द भवसागर पार कर दे, जन्म-जन्म के पाप काट दे, वह कितना महान है। आइए आप भी चाहे जितना पाप कर्म करें, अन्त समय में आराम कहने से आपके कष्ट दूर हो जाएंगे। आप मेरे साथ इस महान शब्द के आगे नतमस्तक हो और तीन बार बोलें—आराम देवता की जय।

अध्यापक : एक आर्ट फिल्म

ईश्वर आदमी को गधा चाहे बना दे पर प्राध्यापक न बनाए। जिन्दगी के सारे सुनहरे अवसर समाप्त हो जाते हैं। अध्यापक एक ऐसा शरीर हो जाता है जिसके दिल होता है पर वह प्यार नहीं कर सकता। या कहा जा सकता है कि वही एक ऐसी फिल्म है जिसमे मार धाड, नाच कलाग, इङ्ली उङ्लू कुछ नही है। नीरस। एकदम कलात्मक फिल्मो की तरह।

जब उम्र उछल-कूद की थी, फिल्मी ज्ञान प्राप्त कर बुद्ध बनने की थी, तब हम कोस की किताबो मे सर मारकर कॅरियर बनाने के चक्कर मे थे। करियर बना तो सीधे बुढापे मे आ गए। हाथ कगन को आरसी क्या, अनपढ की फिल्म क्या? देखिए।

फ्लश-बैक

करियर बना तो आर्थिक दशा मे अभूतपूर्व सुधार आया। घर वालो को सारी तनखाह देकर भी कुछ काला धन बच जाता था। पैसे बचे तो फिल्मो ने पुकारा और हम चले गए। फिल्मी सभ्यता का रग चढने लगा और दिल गाना गाकर किसी से प्यार करने के लिए बल्लियो उछलने लगा।

अब तलाश थी एक प्रेमिका की जिसे फिल्मो मे हिरोइन कहते हैं। तलाश मे कहा-कहा नही भटका। बस, गाडी, सडक, पहाडियो, गुफाओ, भीड भाड, यहा-वहा। कभी पुकारता—तू छुपी है कहा? कभी गुनगुनाता—अब तो आजा। परन्तु सयोग नही हुआ। न किसी से साईकिल टकरावे और न कोई हमसे।

फिल्मो ने ज्ञान दिया था कि हिरोइन छेडा-छाडी मे भी मिल सकती है। परन्तु वहा भी करियर आडे आ गया। बस मे आगे की सीट पर बैठी हिरोइन को चिकोटी काटी और मुस्करा कर देखा परन्तु उस नासमझ ने

इसे प्यार न समझा। उसके मुह से धाराप्रवाह गालिया फूट पड़ी—बदतमीज, स्टूपिड, बास्टर्ड । और हमने सर झुका लिया। पीछे से आवाज आई—क्या बात हो गई सर ! अगले स्टाप पर उतर कर सर को दो मील पैदल जाना पड़ा।

हीरो फिल्मो मे पैकेट भी बदलते हैं। हमारे फिल्मी ज्ञान ने हमे प्रेरित किया। एक दूकान मे पैकेट बदला, परन्तु हमे हीरो न समझकर चोर समझा गया। हम सफाई दे रहे थे और गदगी पसद सफाई नही ले रहे थे। हमे पीटा भी गया। (देखिए समाज का अत्याचार।)

अगले दिन एक नालायक विद्यार्थी व्यग्य मे मुस्कराता हुआ बोला—कल बाजार मे क्या हुआ था सर !

सारे साल उस नालायक को लायक करना पड़ा। परचो के नम्बर बढाए और अध्यापक की इज्जत बढाई। कान पकड लिया कि अब दिल को बल्लियों क्या मिली मीटर भी नही उछालेंगे।

इस बार मा बाप ने हमारी शादी कर एक हिरोइन प्रदान की। दिल फिर उछला प्रेरित हुआ।

पत्नी की बाहो मे बाहें डाल बागो मे घूमे, पत्नी बेसुरी थी इसलिए गाना नही गा पाए। बाजार मे प्यार से गोलगप्पे ही खाकर गुजारा कर लिया।

परन्तु दुर्भाग्य ने यहा भी पीछा नही छोडा। अगले दिन लडकियां खुस-पुस करती मेरी तरफ कुत्छ दृष्टि से देखती कह रही थीं—सर बाजार मे गोलगप्पे खाते हैं, किसी के साथ।

एक विद्यार्थी शांत-स्वर मे बोला—मैंने इन्हें बाहो मे बाहें डाल घूमते देखा, साला हम लेक्चर पिलाता है और खुद ? मैं भी कल पिकी को लेकर घूमूगा। देखना हू क्या करता है ?

अब कोई इज्जत वाला हो तो उसी वक्त नौकरी छोड दे, परन्तु हम बेशर्म अटक हुए हैं।

जिन्दगी आर्ट फिल्म हो गई। घर की छत के नीचे ही समातर फिल्मों का प्रेम करते हैं। हां इज्जत बचाने के लिए फिल्म भी छोड दी है। न रहेगा बांस और न विद्यार्थी हमारी बांसुरी बजाएग।

बाबा ! हिन्दी के नाम पर कुछ

मैं धोखे मे बहुत दिन रह लिया हू, परन्तु अब नही रहूगा। पहले मैं हिन्दी को बहुत तुच्छ समझता था। इस लेने देने के जमाने मे अगर किसी वस्तु से कोई लाभ न हो वह तुच्छ ही होती है। हिन्दी से कोई लाभ नही दिखाई देता था। परन्तु विश्व-हिन्दी सम्मेलन मे जाकर मेरी आखें तो क्या दिमाग तक खुल गया है। पहली बार महसूस हुआ कि पत्नी जो मुझे बोड़म कहती है, सही कहती है। उसका कहना है कि इस प्रजातन्त्र मे लोग बालू मे से तेल निकाल लेते हैं तुम हिन्दी के प्राध्यापक होकर कुछ नही निकाल पाते हो। इस सम्मेलन मे पता चला कि हिन्दी की दुम पकडकर मन्त्रीपद तक को प्राप्त किया जा सकता है। हिन्दी सूरीनाम, फिजी, मारीशस, इगलड, रूस, जर्मनी और न जाने कहा-कहा की यात्रा करा सकती है, टी० ए०, डी० ए० बनवा सकती है।

विश्व हिन्दी सम्मेलन आरम्भ होने से पहले मैं उनसे मिला तो उन्हे बहुत चितित पाया। मैं उनकी चिन्ता और हिन्दी के प्रति उनके अनन्य प्रेम से अभिभूत हो गया। कितना समर्पित है यह व्यक्ति हिन्दी के प्रति! देखकर लगता था जैसे या तो इसका बाप मर गया है या इसे लडकी की शादी करनी है। हमारे यहा लडकी की शादी करना बाप के मरने के दुख जैसा ही है। बाप के मरने से सर से साया उठता है, लडकी शादी करने मे घर का सब कुछ उठ जाता है।

मैंने कहा, "क्या बात है आप बहुत चितित हैं, क्या खाने पीने ठहरने आदि की व्यवस्था ठीक नही हो पायी है ?'

'अरे नही बाबा, इसकी चिंता किसे है ?" वह ऐसी विनम्रता से बोलते हैं जैसे बडे बेचारे से हों।

"तो क्या हिन्दी के रास्ते मे अग्रेजी आ गई है ?"

हमारी बला से उर्दू फारसी भी आए, हिन्दी जाए नही

समझे। आप कुछ समझते हैं नहीं हमे कहे इ परेशान करते हैं। आप हमारी चिंता नहीं समझ पायेंगे।"

"क्या पी०एम० ने आने से मना कर दिया है ?"

"अरे वो तो आ रहे हैं। वही तो चिन्ता भी है। दो बरस हमने जान लगा दी। अब कल कोई हमसे मच छीनने की तैयारी करे तो हमे चिंता नहीं होगी ? हमे उनसे दूर बैठाने का षड्यन्त्र करे तो हम चिंता न करें ? यह भी तो हमारी चिंता है कि कल पी०एम० आए और स्टेडियम न भरा तो ? इत्ता बडा स्टेडियम ले लिया किराये पर, लोग न आये तो ? (हिंदी को सयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाना है) कुछ लोगो का इंतजाम तो किया है। ये सब तो हो जायेगा पर किसी ने हमसे मच छीन लिया तो ? हम इतनी चिंताओं म घिरे हैं और लोग पूछते हैं प्रतिनिधियो के भोजन की व्यवस्था का क्या हुआ ? सबको खाने की पडी है। (किसी को भोजन और किसी को पैसा) वो इंतजाम भी हो जायेगा, पहले पी० एम० तो प्रसन्न हो जाए। नाराज हो गयी तो हमारा टिक्ट तो गया भ।"

मैं उनकी पीडा और चिंता को समझ गया था। वह हिंदी की सीढी पर चढकर पार्टी का टिक्ट लेना चाहते थे। जिन्हे टिक्ट मिल चुका था, वह मत्री पद चाहते थे।

कितनी बार मन्त्रिमडल म परिवर्तन आए पर ससुर उनका नम्बरवा न आवा। इन्होंने क्या कोई जुलम किए हैं। इस बार खुश हो जावे तो शायद मतवा बन जाए। पर खुस करले की खातिर सब कुछ अपने हाथ में करना होगा। कइसल जानेगी कि इत्ता बडा सम्मेलन हमारे किए से हो रहा है। ये ही सबसे बडी चिंता हम। कइसल होइल यह सब। मच कइसे पकडा जाव। कइसल ? कइसल ?

यही सोचकर उन्होंने उदघाटन से पूव माइक एक 'अपने' को पकडा दिया था। उनके हाथ म माइक था और वह हिन्दी के प्रति अपनी चिंता प्रकट कर रहे थे। लग रहा था जैसे हिंदी के चुनाव होने वाले हैं, अत वह नारे पर नारे लगा रहे थे—जय हिंदी जय नागरी। जैसे ही पी०एम० जी पहुंचा, हिंदी गायब हो गयी। उनके नारों ने करवट बदल ली। हिंदी के स्थान पर पी०एम० जी आ गए थे।

एक के बाद एक भारतीय हिन्दी सेवियो ने अपने भाषणों म जिस प्रकार पी०एम० जी को हिन्दीमय कर दिया उससे यही लग रहा था कि वह विश्व हिन्दी नहीं, पी०एम० सम्मेलन हो रहा है।

पी०एम० ने उद्घाटन किया और चले गए, लगा मच से हिन्दी चली गई। आयोजको को लगा कि उद्घाटन के साथ समापन समारोह भी हो गया। सबने तसल्ली से हाथ झाडे, स्टेडियम मे जुटी भीड को गव से देखा और हैं हैं हैं करते पी०एम० के पीछे हो लिए। सवाल था उनकी दया दृष्टि का। सब की चिंता यही थी कि उनकी नजर उन पर पडती है कि नही। बेचारे आरम्भ से अत तक चिंता मे रहे।

सम्मलन मे सब कुछ था परन्तु हिन्दी गायब थी।

एक सज्जन एक विदेशी विद्वान को बगल मे लिए घूम रहे थे, बार-बार उनके देश की प्रशसा के गीत गा रहे थे। गोरी चमडी के मुह से हिन्दी सुनकर वह गदगद हुए जा रह थ।

कुछ सज्जन इस खोज मे थे कि देखें अगला सम्मेलन कहा होता है, वहा के प्रतिनिधि के ही चरण ढूढे जाए।

निष्कर्ष यह कि वहा लगभग हरेक के हाथ म कटोरा था, उसमे हिन्दी के नाम पर कुछ भी मिल जाए।

राधेलालजी का कलयुग

राधेलालजी पान के बहुत शौकीन हैं। पान वाले तिवारीजी उन्हें देखते ही चादनी सादी का जोडा लगाने लगते हैं। राधेलालजी कभी पान लगाने के लिए कहते नही हैं, बस, आ कर तिवारी का हाल चाल पूछते हैं और तिवारीजी उनकी पसन्द का पान उनके हाथ मे पकडा देते हैं। राधेलालजी मेरे मित्र हैं और मित्रता म अक्सर पान खिला देते हैं। खाना खाने के बाद जुगाली करने की आदत उन्ही की देन है। उस दिन भी खाना खाने के बाद मैं जुगाली करने के इरादे से तिवारीजी की दुकान पर खडा था। देखा, राधेलालजी मानिनी नायिका के समान पान की दुकान से मुह फेरे चले जा रहे हैं। यह मेरे लिए आश्चर्य का विषय था।

मैंने राधेलालजी को पुकारा, 'राधेलालजी, राधेलालजी ! क्या हाल-चाल है ?'

राधेलालजी रुके और मेरी ओर देखते हुए वही खडे हो गए, बोले, 'ठीक हू आप सुनाइए।'

मुझे लगा वह पान की दुकान तक नही आएगे, मुझे ही उन तक जाना पडेगा। मैंने हाथ मिलाते हुए कहा, 'आइए, पान हो जाए।'

मायूस आवाज म राधेलालजी बोले, 'नही भइया, अपना तो आजकल कलयुग चल रहा है। चाय भी बिना दूध शक्कर की चल रही है।'

'आपका कलयुग ! कलयुग तो सारी दुनिया मे छाया हुआ है। और आज का नही, हमारे पैदा होने से पहले अवतरित हो चुका है। ये एकाएक दो दिन मे आपके यहां आपका कलयुग कहा से आ गया ?' मैंने मुस्कराते हुए कहा।

'मेरे यहा क्या भइया, इन दिनो तो हर बाबू के यहा कलयुग चल रहा है। बचारा निरीह बाबू कलयुग की मार से पीडित सतयुग की प्रतीक्षा म कभी बच्चो को डाटता है और कभी चिडचिडी पत्नी से डाट खाता है।'

सतयुग और कलयुग की बात करते हुए राधेलालजी ब्रह्मज्ञानी लग रहे थे। मैंने प्रणाम करते हुए कहा, 'हे परम ज्ञानी मैंने रामचरितमानस में तुलसीदास द्वारा लिखा कलयुग का वर्णन पढ़ा है। दुनिया में कलयुग के प्रभाव को दिन प्रतिदिन देखता हूं। पर एक बाबू के जीवन में कलयुग के बाद सतयुग और सतयुग के बाद कलयुग कैसे आता है—यह मेरी अल्प-बुद्धि से बाहर है। अतः आप अद्भुत व्याख्या द्वारा मुझे समझाइए कि यह कैसे होता है और मेरे अज्ञान को दूर करें।'

राधेलालजी ब्रह्ममुद्रा में खड़े हो गए। परन्तु मुझे लगा कि उनकी आत्मा भटक रही है। मैंने उन्हें चांदनी-सादी का जोड़ा ला कर दिया, तो वह भ्रष्टाचार के समान खिल उठे और खिलते हुए बोले, 'भइया ऐसा है, एक महीने में बाबू को सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलयुग—सभी के दर्शन हो जाते हैं। पूछो, कैसे? तो वो ऐसे कि जिस दिन वेतन मिलता है, उस दिन बाबू का मन सात्विक भावों से भर उठता है। न किसी से कोई द्वेष न घृणा। न कोई दुःख, न पत्नी से लड़ना-झगड़ना और न बच्चों को पीटना। बाबू में सत्यवादी हरिश्चन्द्र की आत्मा आ जाती है। इन दिनों दुकानदार अगर पैसे लौटाते समय गलती से अधिक दे दे तो बाबू उसे सधन्यवाद लौटा देता है। स्वप्न में भी मित्रों को पार्टी देने का वायदा बाबू इन्हीं दिनों निभाता है। बाबू-पत्नी वेतन में से दस रुपये निकाल कर प्रसाद चढ़ाती है। परन्तु यह सतयुग अधिक दिन नहीं रहता।

'सतयुग के बाद आता है त्रेता युग। मिला हुआ वेतन ईमानदारी-सा क्षीण होने लगता है। घर में आसुरी शक्तियां सिर उठाने लगती हैं। ये आसुरी शक्तियां कभी मेहमानों के रूप में आती हैं, तो कभी तीज-त्योहारों के रूप में। बाबू पैसे को दांतों से पकड़ लेता है। घर में युद्ध का वातावरण तैयार होने लगता है। बाबू-पत्नी अपने-अपने हथियारों से सजने लगते हैं। ऐसे में गृह-युद्ध के लघु संस्करण खेले जाते हैं। अनेक बार कंद मूल से गुजारा करना पड़ता है।

'त्रेता के बाद द्वापर आता है। बाबू दुविधाग्रस्त हो जाता है। यह खरीदूं या न खरीदूं—की चिन्ता उसे निरन्तर सताती है। पति पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-भाई में महाभारत का जेबी संस्करण खेला जाता है। इस

महाभारत का आखों देखा हाल, पडोस का सजय मोहल्ले के धृतराष्ट्रो को नमक मिर्च के साथ सुनाता है। आसुरी शक्तिया अक्सर सिर उठाती हैं।'

'इसके बाद आता है कलयुग—बाबू जीवन के भ्रष्टाचार से भी अधिक काला युग। आसुरी शक्तिया अपना आधिपत्य जमा लेती हैं। बाबू सब्जी खरीदते समय बैगन चुरा कर थैले म डाल लेता है। दुकानदार से गलती मे मिले दस पैसे को वह चुपके से जेब म डाल लेता है और चेहरे पर बेईमानी के भाव को आने तक नही देता। पत्नी द्वारा छिपाए काले धन की खोज मे बाबू अपने ही घर मे चोरी करता है। बच्चे पिटते ह, पत्नी चिडचिडाती है। विश्व युद्ध के बादल मडराने लगते ह। घर में अनेक विस्फोट होते ह। जेब मे सिगरेट होते हुए भी बाबू दोस्तो से सफेद झूठ बोलता है। इस समय न कोई मित्र होता है, न कोई पत्नी और न कोई भाई बन्धु होता—क्योंकि जेब म पैसा नही होता है। कलयुग का समय दस से पन्द्रह दिन का होता। भूखे पेट भजन करता हुआ बाबू सतयुग के आने की बेकरारी मे प्रतीक्षा करता है।'

इस अद्भुत व्याख्या को सुन कर मैंने राधेलालजी के चरण थाम लिए और कहा, 'प्रभु आपने मुझे अज्ञान से ज्ञान की ओर ला दिया है। कितना अज्ञानी था मैं कि कलयुग को भोग रहा था और जान नही रहा था कि आजकल कलयुग चल रहा है।'

'क्या तुम्हे पता नही था कि आजकल तुम्हारा कलयुग चल रहा है!' राधेलालजी आश्चर्य से बोले।

'नहा—कलयुग ज्ञानी! वरना मैं पचास का नोट तुडवा कर पान खान यहा आता!'

'इस कलयुग मे तुम्हारे पास पचास रुपए हैं' उनकी आखों मे सतयुग की चमक थी।

हा पर वो गम के लिए!' मैं हकलाया। पर उन्होंने मेरी बात नही सुनी और बोले, 'मुझे तीस रुपए देना, सतयुग म लौटा दूगा।' उन्होंने मेरी जेबें टटोली और तीस रुपए लेकर तेजी से चल दिए।

राधेलालजी ने मुझे कलयुग के साक्षात दर्शन करवा दिए थे। पत्नी

सावधान ! क्रिकेट आ रहा है

सावधान क्रिकेटद्रोहियों इस बार भारत म क्रिकेट महामारी के रूप मे फलने वाला है। पहले तो एक ही विदेश टीम क्रिकेट-आक्रमण करती, थी, इस बार रिलायस कप की ओट लेकर सात विदेशी क्रिकेट महारथी आक्रमण करने वाले है । सात महारथियो के आक्रमण से, चक्रव्यूह मे घुसा अभिमन्यु भी अपने आपको नही बचा पाया था, आप तो किसी भी खेत की मूली नही हैं। इसलिए कहता हू सावधान हो जाओ। क्रिकेट ज्वर की दवा हकीम लुकमान के पास भी नही थी । आपको अपनी रक्षा स्वय करनी है। सावधानी हटी कि दुघटना घटी।

यदि आपको किसी सरकारी दफ्तर मे काम है तो टालिए मत, अभी कर डालिए। पानी का बिल जमा कराना है, टेलिफोन का बिल देना है, मकान के लिए ऋण लेना है, पेंशन का मामला है या जन्म प्रमाणपत्र बनाना है, बिना देर किए कर डालिए। क्रिकेट की चिड़िया खेत चुगने वाली है। एक महीने तक मदान साफ दिखाई दगा। दफ्तर मे कही कानों म ट्राजिस्टर लगे नजर आयेंगे और कही टी० वी० सेट। आप पूछेंगे, "भैया, मेरे हौउसिंग लोन का क्या हुआ।

उत्तर मिलेगा, "चौदह पर दो हो गये!" अब सुलझाते रहिए गुत्थी चौदह पर दो की।

आपका मनहूस या भाग्यशाली होना, क्रिकेट पर निभर होने वाला है। क्रिकेट के इस मौसम म किसी क घर जाना हो तो सावधानी से जाइएगा। आपके घर म घुसते ही अगर गावसकर या वेंगसरकर ने चौका छक्का लगा दिया, या कपिलदेव न विकेट चटका दी तो आप भाग्यशाली कहलायेंगे। आपका स्वागत हागा। आपसे चाय-पानी को पूछ [illegible] जायगा अपितु चाय के साथ बिस्किट भी [illegible]। पर [illegible] में घुसते ही कोई भारतीय खिलाड़ी [illegible] तो आपके [illegible] नहीं

है। क्रिकेटप्रेमी परिवार आपको ऐसे देखेगा जैसे कच्चा चबा जायेगा। बिन बुलाये मेहमान-सा स्वागत होगा जिससे अपमान ही अच्छा होता है। चाय-पानी की दूर बठने को जगह मिल जाये तो बहुत है। इसलिए किसी के घर मे घुसने से पहले अच्छा होगा कि मैच मे भारत की स्थिति जानकर ही घुसें।

क्रिकेट के बारे मे थोडा सामान्य ज्ञान बढ़ा लीजिए। आप अतर्राष्ट्रीय राजनीति मे कितने ही बडे ज्ञाता हो, या गणित के वेत्ता हो पर यदि आपको क्रिकेट की राजनीति के बारे मे कुछ पता नही है या क्रिकेट के आकडो स आप अनजान हैं तो आप ज्ञानी होते हुए भी अज्ञानी हैं। किसी भी पार्टी, शादी-ब्याह मे आप अकेले पड जायेंगे और खोई गाय के समान बौराये स घूमते रहेंगे। आपको घास डालने वाला कोई नही मिलेगा। आप कहेंगे, "इराक-ईरान युद्ध का क्या होगा ?" जवाब मिलेगा, "इराक ईरान की टीम भी आई है क्या ? खैर कोई भी लडे कप तो वेस्ट इडीज ही ले जायेगी।" आप देश की महगाई की चर्चा करेंगे। वहा विकेटो के पतन का स्वर सुनाई देगा।

हे पति परमेश्वरो, सावधान ! यदि तुम्हारी पत्नी क्रिकेट प्रेमिका है तो अभी से बतन धोने, कपडे धोने, बतन माजने और खाना बनाने का अभ्यास आरम्भ कर दो, नही तो उपवास के दिन आने वाले हैं। इधर आपके पेट मे चूहे कूदेंगे, दौडेंगे। पत्नी उनको छोड पाएगी ? यदि आपके पास काला सफेद पुराना टी० वी० है तो दस हजार का जुगाड कर लो। पास नही है तो उधार ले लो। वरना अपने बच्चो के सामने खूसट आप और पत्नी की दृष्टि मे कजूस पति सिद्ध होने वाले हो।

हे पत्नियो सावधान ! यदि आपके पति क्रिकटप्रेमी हैं तो तुम्हारा दिन रात का सुख चन गायब होने वाला है। तुम्हारे घर म एक महीने के लिए सौतन का प्रवेश हाने वाला है जिसका नाम क्रिकेट है। आपके पति एक महीने के लिए काम से जाने वाले हैं। आपके यहा क्रिकेट की धमा चौकडी मचने वाली है। घर का बजट ब्लड प्रेशर की तरह बढने वाला है। घर के गिलास विकेटो की तरह गिरनेवाले हैं। दूध-चाय चीनी रनो की रफ्तार की तरह बढने वाले हैं। जितना आराम करना है, कर लो।

पति से जितनी प्रेम की पींग बढानी है, बढा लो। वरना अब पति क्रिकेट की पींग बढाने वाले हैं।

हे माता पिताओ सावधान! बच्चो को जितना पढाना है, पढा लो। वरना बच्चो की कॉपी किताबो मे गोद लगने वाली है। आप पहाडा पूछेंगे, वो स्कोर बतायेंगे। आप अलाउद्दीन के बारे में पूछेंगे, वो अजहरुद्दीन के बारे म बतायेंगे। हे अध्यापको! तुम भी अपना कोर्स जल्दी कराओ वरना तुम्हारी कक्षाओ मे छात्रो के स्थान पर कौए बोलेंगे। अपने सुदर विद्यार्थियो का सौंदय बार-बार निहार लो वरना कॉलेज मे सूखा पडने वाला है।

हे प्रेमियो, यदि आपकी प्रेमिका क्रिकेटप्रेमिका भी है तो सावधान! एक महीने के लिए वो आपके पहलू से गायब होने वाली है। उसे बाधकर रखना है तो स्वय भी क्रिकेट के खूटे से बधे रहो। अपने बाल रवि शास्त्री, गैटिंग या इमरान के स्टाइल मे कटवा लो। ध्यान रखना जिस भी स्टाइल मे कटवाओ वो प्रेमिका का चहेता खिलाडी हो वरना पासा उल्टा पड सकता है। हे फटेहाल आशिको, यदि लडकी हाथ मे नही आ रही है तो यह सुनहरा अवसर है। यदि वो क्रिकेट आशिक हो तो बन गया काम। आसमान के तारे तोड लाने के बजाय क्रिकेट मॅच की टिकट ले आओ।

हे नौकरीशुदा क्रिकेटप्रेमियो, चाहे शरीर कितना भी बीमार पड़े, छुट्टी मत लेना। छुट्टिया तो तुम्हे क्रिकेट का विश्वकप देखने के लिए बचाकर रखनी हैं। जिसने इस विश्व कप का एक भी मॅच छोडा उसे क्या स्वर्ग म स्थान मिल पायेगा!

परिवार नियोजन का यह नारा अब बेकार लगने लगेगा—छोटा परिवार सुखी परिवार। इन दिनो नारा बदल जायेगा—क्रिकेट परिवार सुखी परिवार। कितना अच्छा लगता है, क्रिकेट खा रहे हैं, बिछा रहे हैं, पी रहे हैं ओढ रहे ह।

इन दिनो तो देवता भी स्वर्ग से भारतभूमि की ओर निहारेंगे। देवताओ को वो सुख कहा जो भारतवासियो को है। यही कारण है कि देवता भी भारतभूमि म जन्म लेने के लिए उत्सुक हो उठेंगे। भ्रष्टाचार, महगाई, अनैतिकता के कारण देवताओ का विश्वास उठ गया था। उसे अब क्रिकेट जमा देगा।

साहित्य का शेयर बाजार . वार्षिक समीक्षा

आप शर्मा जी को नही जानते हैं। मैं जानता हू। हो सकता है, आपके आस पास कोई शर्माजी रहते हो, या आपके दफ्तर मे ही काम करते हो, क्योंकि शर्मा नामक व्यक्ति कही भी पाया जा सकता है, परन्तु मैं जिन शर्माजी की बात कर रहा हू वे 'वो' वाले शर्मा जी नही हैं। वह शर्मा जी टी० आर० शर्मा हैं। बैंक मे काम करते हैं और मेरे अच्छे पडोसी मित्र हैं। पडोसी मित्र होने के बावजूद हम दोनों, सीमाओ पर सेना जमा करने की नौटंकी नही करते हैं।

शर्मा जी का साहित्य से विशेष संबंध नही है। साहित्य के नाम पर वह सुरेंद्र शर्मा, शैल चतुर्वेदी या अशोक चक्रधर को जानते हैं। वे मुझे भी नहीं जानते हैं। क्योंकि मैं उन्हे कविता सुनाकर हसाता नहीं ▌। उन्होंने मुझे कई बार नेक सलाह दी है कि मैं भी ऐसी कविताए लिखू। शर्मा जी का शेयर बाजार से बहुत गहरा सम्बन्ध है। शर्मा जी के कारण शेयर बाजार से मेरा भी मधुर सम्बन्ध स्थापित हो गया है। शेयर बाजार से प्रेम करना दोधारी तलवार की तरह है। अखबार का वह पन्ना जो पहले बेकार लगता था, आजकल महत्वपूर्ण लगने लगा है। अब यह चिन्ता नही होती है कि पंजाब का स्कोर या क्रिकेट का स्कोर क्या रहा। चिन्ता यह रहती है कि "यर चढा कि नही ?

"र्माजी मिलते हैं तो मुझसे साहित्य का हाल चाल पूछते हैं और मैं शेयर बाजार का पूछता हू। शेयर बाजार और साहित्य म अंत सम्बन्ध स्थापित हो रहा है। कई बार सोचता हू तो लगता है कि साहित्य भी किसी "ेयर बाजार से कम नही है। मैंने कई लेखको के भाव चढते गिरते देखे हैं।

काफी पहले, जब मैं नवोदित व्यंग्यकार था तो मैंने समीक्षा मे शनि-

कारी परिवतन किया था। आज युवा व्यग्यकार होकर एक और क्रांति कारी परिवतन प्रस्तुत कर रहा हू। इस तरह की क्रांतिया करके ही मैं प्रगतिवादी साहित्यकार कहलाऊगा। अत मैं समीक्षा का एक नया प्रति मान प्रस्तुत कर रहा हू। जिससे मुझे भी प्रगतिशील आलोचक का गौरव प्राप्त हो।

साहित्य बाजार के वष का आरम्भ उदासी भरा रहा, पिछले वष पड़े साहित्यिक छापों के कारण और प्रकाशकों की उदासीनता के कारण सुस्ती रही। बजट मे वित्तमत्री द्वारा डाक की बढ़ी हुई कीमतो की घोषणा ने कई नई कपनियो की हालत खस्ता कर दी। टाइप के खर्चे और डाक-व्यय बढ़ने से नये लेखको के प्रकाशन मे गिरावट आई साहित्यिक छापो मे कमी आने से तथा वित्त मत्रालय प्रधानमत्री के हाथ मे होने से बाजार मे उछाल की भविष्यवाणी की जा सकती है।

पजाब के हालात के कारण पत्रकारों की चादी रही। अखबारी मसाले के लिए भटकना नहीं पडा। नित्य नई सनसनीखेज खबरों के कारण पत्र कारिता मे लाभ का अधिष्ठान सूचकाक 20 प्वाइट ऊपर चढ गया। इस वक्त मे पजाब के अतिरिक्त श्रीलका, टी० एन० वी० और पाकिस्तान ने भी सहयोग दिया। इन सस्थाओ के कारण पब्लिक ने भी पत्रकारिता म रुचि दिखाई। इसके प्रभावस्वरूप अनेक पत्र पत्रिकाए बाजार मे आयी और उनको पब्लिक का अच्छा समथन प्राप्त हुआ।

इस तुलना मे साहित्य की हालत खस्ता ही रही। कुछ पत्रिकाओ को तो पाक्षिक की जगह मासिक होना पडा। एक-आध साहित्यिक पत्रिका भी आई पर तु उसे विशिष्ट पब्लिक का ही समथन मिला। छोटी कपनियो द्वारा साहित्यिक पत्रिकाओ का प्रकाशन बहुत कम देखने को मिला। अभी भी बाजार सुधरने का सकेत नही है। वित्तीय सस्थाए इस बारे मे सुगबुगा भी नहीं रही हैं।

आलोचना के क्षेत्र मे मदडियो की चादी रही। आलोचकों का न तो कोई नया इशू ही बाजार म आया और न ही पुराने तथा प्रस्थापित आलोचकों के बाजार भाव मे तेजी आई। कोई पुरानी कपनी बोनस के रूप

ने किसी नये लेखक को उछालने में असमर्थ रही। ऐसे आलोचक शायद ही दीया लेकर खोजने से मिलें, जिनके बाजार भाव इस वर्ष ऊपर चढ़े हो। किसी नये आलोचक का उदय भी इस वर्ष नहीं दिखाई दिया।

कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में अवश्य तेजड़ियों ने अपना प्रभाव दिखाया। अनेक नये उपन्यास और कहानी-संग्रह बाजार में आये जिन्हें पब्लिक का अच्छा समर्थन प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र में पुरानी पीढ़ी के लेखकों की अधिक मांग रही। 'जैनेंद्र', 'अमृतलाल नागर', 'रमेशचंद्र शाह' जैसे साहित्यकारों का बाजार भाव तो बढ़ा ही, 'गिरिराज किशोर', 'नरेन्द्र कोहली', 'रामदरश मिश्र' और 'सजीव' को अधिक आधार मिला। मुद्राराक्षस पत्रकारिता के क्षेत्र में काफी सफल रहे। कहानी के क्षेत्र में 'मृदुला गर्ग', 'मंजुल भगत', 'काशीनाथसिंह', 'धीरेन्द्र अस्थाना', 'रमेश उपाध्याय', 'अजित कुमार', 'राजकुमार गौतम', 'बलराम' आदि ने अपने संकलन और कहानियां दीं। पब्लिक का समर्थन सामान्य रहा।

मंच के समर्थन के कारण मंचीय रचनाकारों के शेयर भावों में तेजी ही रही। कभी होली, कभी गणतंत्र दिवस, कभी स्वतन्त्रता दिवस और कहीं शादी-ब्याह के मौकों पर संस्थाओं की मांग होने के कारण इनके बाजार भाव चढ़ने पर ही रहे। 'अशोक चक्रधर' में 'अपना उत्सव' के दौरान दूरदर्शन की रुचि के कारण इसमें काफी तेजी आई। कुछ पुराने मंचीयों के भाव काफी नीचे आ गए हैं। उनमें से तो कुछ इस बाजार में रियायती दाम पर मिलने लगे हैं और कुछ का अता पता ही नहीं है 'शरद जोशी' के भाव, मंच और साहित्य पर काफी तेजी में रहे। तेजड़ियों ने इनमें काफी रुचि दिखाई है। मंच और साहित्य के अतिरिक्त दूरदर्शन जैसी सरकारी और फिल्म जैसी गैर-सरकारी संस्थाओं ने भी इनमें विशेष रुचि दिखाई है। इनके विकास की दर बढ़ रही है।

फिल्मी संस्थाओं एवं दूरदर्शन द्वारा रुचि लेने के कारण 'मनोहर श्याम जोशी' की बुनियाद भी काफी सुदृढ़ रही। पिछले वर्ष बाजार में आए हम लोग का पब्लिक का गहरा समर्थन प्राप्त हुआ। जितना सोचा गया उससे 70 गुना अधिक समर्थन प्राप्त हुआ। इधर रामायण के ।९

आने से सभवत इस कपनी पर कुछ प्रभाव पड़े।

कविता के क्षेत्र मे पूजी लगाने वालो का अभाव ही बना रहा। अनेक कवियो ने इस बार पूजी लगाने वालो का दरवाजा खटखटाया पर तु इसे न तो सस्थाओ का ही विशेष समथन मिला और न ही पब्लिक ने कोई रुचि दिखाई। वष के आरम्भ म तो हालात बहुत ही खराब रहे और अनेक नये कवि समथन के अभाव मे औंधे मुह गिरे रहे। कविता के क्षेत्र मे मडिया की चादी रही। पर्याप्त समथन न मिलने के कारण अनेक नये कवि कुठा और हीन भावना की ग्रथियो के शिकार हुए। उन्हें छोटी पत्रिकाओ का भी पर्याप्त समथन नही मिला।

वष के मध्य मे ज्ञानपीठ जैसी सस्था ने कदम बढाया और उसके कविता के बाजार म आने से कुछ सुगबुगाहट हुई। विनोद दास' के कविता सग्रह को ज्ञानपीठ का समथन मिलने से सुधार हुआ। विनोद दास की माग अचानक बढ गई और अनेक छोटी बडी पत्रिकाओ ने उसकी माग की। साहित्य अकादमी, हिन्दी अकादमी के कारण गिरावट मे कमी आई, और बाजार का अधिकृत शेयर सूचकाक बढ गया।

इस वष भोपाल द्वारा साहित्य मे विशेष रुचि न लेने के कारण मदी आई। अनेक नये सकलन, पुस्तकें खरीद के अभाव मे प्रकाशको के पास पडे रहे। इस मदी का अधिक प्रभाव नये लेखको पर पडा। प्रकाशक बाजार से उतना पैसा नही उठा पाए, जितना उन्होंने सोचा था। इस कारण अनेक लेखको को मिलने वाली रायल्टी मे कटौती हुई। कुछ प्रकाशको ने तो हानि दिखाकर रायल्टी की घोषणा ही नही की। इस कारण लेखको पर आर्थिक खतरा मडरा रहा है।

भोपाल के बाद हिमाचल खरीद मे रुचि दिखा रहा है। कपनियो के कुछ निदेशक वहा के मुख्यमत्री से सम्बध जोडे हुए हैं, और उन्ह आर्थिक लाभ भी हुआ है, पर तु जनता म उनकी साख गिरी है।

कुछ कपनियों म नये सपादक आने स उन पत्रिकाओ की माग म वद्धि हुई। 'राजेन्द्र अवस्थी' की इस क्षेत्र मे माग रही।

'डॉ० धमवीर भारती साठ वष के होने से और अधिक महत्वपूर्ण हो

गए। पब्लिक मे इस शेयर की साख और बढी। अनेक पत्रिकाओ मे छपी रिपोर्टों के अनुसार यह कम्पनी पाठको का पर्याप्त लाभ ले रही है और इसे भविष्य मे पूरा समथन मिलने की सभावना है। इस कम्पनी ने कोई नया प्रोडक्ट बाजार नही दिया, परतु इसके पुराने प्रोडक्ट ही काफी लाभ द रहे हैं।

कुल मिलाकर पिछला वष मिश्रित रहा। आगामी वष म भी पत्रकारिता की सस्थाओ, पब्लिक एव तेजडियो द्वारा पर्याप्त समथन मिलने की सभावना है। नये इशू के प्रति जनता का विश्वास अभी जमा नही है। हा, कई पुरानी कम्पनिया अवश्य नये वष मे और अधिक सुदढ होगी। 'जनेंद्र जी' म ज्ञानपीठ इस वष अवश्य रुचि दिखाएगा। 'अज्ञेय' विदेशी कम्पनियो से मिलकर, बाजार मे अपनी माग बनाए रखेंगे। कुछ नये नामवर आलोचक शायद कोई नया इशू बाजार मे दें। ज्ञानपीठ इस वष व्यग्य के क्षेत्र को समथन देगा। कविता के क्षेत्र मे मदडियो की बनी रहेगी।

फिर आइयो खेलन

होली से मैं वैसे ही घबराता हू जैसे आजकल लोग ईमानदारी, नैतिकता और सदाचार से घबराते हैं। होली का आगमन सुनकर मेरा हृदय ससुराल जाती नव वधु सा कापने लगता है। मेरा कायर हृदय उस दिन भी कापा था जब विवाह के बाद पहली होली ससुराल मे खेलने का निमत्रण मिला। साली शब्द वैसे तो बडा आनददायक, मनोहर और रोमासकारी लगता है परतु होली और साली जुडकर जीजा के लिए खतरनाक स्थितिया पैदा कर देते हैं। द्रोणाचार्य द्वारा रचे गये चक्रव्यूह को तो अभिमन्यु ने भेद दिया था परतु अगर साली द्वारा रचे गये होली व्यूह को भेदने की समस्या होती तो शायद अभिमन्यु भी साफ-साफ कह देते, "आई एम सौरी युधिष्ठिर अकल।"

होली भी तो एक युद्ध ही है, जो रगो से लडा जाता है। होली का आगमन जानकर होली वीर पिचकारियो के रूप मे अपने-अपने हथियार सभालने लगते हैं। किसको कैसे रग लगाना है, इसके लिए मत्रणाए आरभ हो जाती हैं। जो इस युद्ध को नही लडना चाहता, उसी से जबरदस्ती युद्ध लडा जाता है। परतु इस युद्ध में शत्रु को समाप्त नही अपितु शत्रु की शत्रुता को समाप्त किया जाता है।

मैं ससुराल मे सालियो के साथ होली युद्ध लडने से घबरा रहा था। अपने घर मे कुत्ता शेर होता है और ससुराल मे साली शेरनी होती है। ऐसी शेरनियो से तो भगवान कृष्ण भी घबरा गये थे। जिन गोपियो को कृष्ण भी मुरली की तान पर नचाया करते थे, उन्ही कृष्ण को गोपिया ने होली पर नचाया, छकाया और फिर मुस्कराकर बोली, 'लला फिर आईयो खेलन होरी।' ऐसा ही मेरे साथ भी होने वाला था। मुझे मालूम था कि रग रोगन से पोतकर अतत मुझे उजबक सिद्ध करके सालिया कहेंगी, "जीजा फिर आइयो खेलन होरी। मैंने भगवान का नाम लिया

तो भगवान कृष्ण आकर मेरे मन को धिक्कारने लगे और होली गीता का प्रवचन करते हुए बोले, "रे मूढ, कैसे समय मे तू अपने हथियार डाले बठा है, उठ और सालियो के साथ होली युद्ध लड। जब विवाह की ओखली मे सर दिया ही है तो मूसलों से क्यो डरता है। होली का रग न तो तुझे जला सकता है और न ही गला सकता है। अच्छी तरह से नहाने के बाद तो तू फिर वैसे का वैसा हो जायेगा। तेरा मल दूर हो जायेगा। तू तो ससुराल में जाने का कम कर फल को तू सालियों पर छोड दे, तुझे तो केवल काम का ही अधिकार है न, तू चिता मत कर, जब-जब हानि होगी मैं तेरी सास के रूप मे, तेरी रक्षा करूगा।" इसके बाद भगवान कृष्ण ने विराट रूप दिखाया जिसमे सारा ससार होली खेल रहा था कही काले धन की होली खेली जा रही थी और कहीं गरीबों के खून से होली खेली जा रही थी और कही मुझ जैसे कायर सालियो से होली खेल रहे थे। मैंने भी अपनी कमर कसी और ससुराल होली खेलने के लिए चल दिया।

मैं ससुराल पहुचा तो मेरी सास ने मेरी बहुत आवभगत की, मुझे भाति भाति के पकवान खिलाये। इधर वो पकवान खिला रही थी और उधर सालिया चेतावनी दे रही थीं। कि कल होली मे जीजाजी की वो गत बनाएगे कि जाजी पहचान नही पाएगी। मैं बलि के बकरे सा पकवान भी खा रहा था और सालियो को भी देख रहा था। पाठको, आपकी जनरल नॉलिज के लिए बता दू कि मेरी दो सालिया हैं और वो दोनो सौ-सौ कौरवों के समान हैं। एक साला है जो छोटा है परतु बहुत खोटा है। साले-सालियो की निरतर धमकिया सुनकर मेरा अदर का पुरुष जाग उठा और मैंने भी ललकारते हुए कहा, "होली पर तुम्हें भूत नही बनाया तो मैं तुम्हारा जीजा नही।"

किसी को विरह म नीद नही आती है, किसी को काले धन के कारण नीद नही आती है। मुझे होली के कारण नही आ रही थी। अचानक मुझे उपाय सूझा। क्यो न सुबह होने से पहले मुह अधेरे सालियो के मुह रग से पोत कर काले कर दू। परतु रग कहा से आयेगा? मैंने अधेरे म इधर-उधर देखा कुछ नही दिखाई पडा। मैं उल्लू तो था नही जिसे रात मैं साफ-साफ दिखाई देता है, मैं तो गधा था जो बिना हथियार युद्ध लडन

मैं समझ गया कि भक्तों को दर्शन देने का उचित समय आ गया है। अगर अब भी मैं गुसलखाने से बाहर नहीं निकला तो लाठियों की वो बौछार होगी कि मेरे खून का रंग सबको पता चल जायेगा। यह सोचकर मैंने, "मैं हूं मैं हूं मुझे लाठी मत मारना, मैं प्रेम हूं" कहकर चिल्लाना शुरू कर दिया। और मैं गुसलखाने से बाहर निकला। मोहल्ले ने मेरी हालत देखी तो हंसी का फव्वारा छूट गया। बूढ़ी औरतें राम-नाम का जाप छोड़ पोपली हंसी हंसने लगीं। बच्चे आंचल से निकल किसी जंतु को देखने के भाव से मैदान में आ गए और युवक लाठियां जमीन पर पटक पटक कर अट्टहास करने लगे। मैं उजबक-सा अपनी सास और साली की ओर देख रहा था। मेरा सारा शरीर रंगीन पानी से निचुड़ रहा था और मेरा हृदय शर्म से पानी पानी हो रहा था। लोग मुझसे पूछ रहे थे, "क्या हुआ? क्या हुआ?" और मैं निरुत्तर बटेर की तरह इधर-उधर देख रहा था।

अगले दिन ससुराल में मैंने जो होली खेली, वह होली नहीं थी, होली की औपचारिकता थी। अपनी सास से आंख मिलाने का साहस नहीं हो रहा था। सालियां की आंखें बार-बार मुस्करा उठती थीं और जब मैं पत्नी समेत ससुराल से चलने लगा तो साली ने कहा, "जीजा फिर आइयो खेलन होली।"

के लिए आ गया था। मुझे अपने पर बहुत क्रोध आ रहा था।

खैर मैंने अंधेरे मे इधर उधर हाथ मारे तो जूते पालिश करन की डिब्बी हाथ मे आ गई मन मयूर नाचने लगा। मैंने पालिश हाथो पर मिली और जनानखान की ओर चल दिया जहा मेरी पत्नी, सालिया और मेरी सास सोयी हुई थी। मैंने धीरे धीरे बडी साली क चेहरे को पालिश से पोतना शुरू कर दिया। उसे रगन के बाद मैं विजयी भाव से दूसरी साली की ओर बढा वह घोडे बेचकर सोयी लग रही थी। मैंने बूट पालिश से भरा हाथ उसक चेहरे पर लगाया ही था कि चोर-चोर की आवाज से कमरा गूज उठा। यह मेरी सास की कोयल कूक थी। जिसे मैं साली समझा था वो मेरी सास निकली। मैं सरपट बाहर की ओर भागा। छुपने के इरादे से गुसलखाने मे घुसा परतु अधेरे म बाल्टी से टकरा गया और औंधे मुह फश पर जा गिरा। कपडे गीले हो गये और बत्तीसी हिलकर दद करने लगी। मैंने दद को दबाने के लिए हाथ से मुख के अजर-पजर ठीक किये तो सारा मुह अपने-आप बूट पालिश से रग गया। जिन हाथो से *मैं सालिया को रगना चाहता था, उन्ही हाथो न मेरे चेहरे को जूता* समझकर पालिश कर दी।

बाहर चोर की हूक मच रही थी और मैं गुसलखाने के अधेरे मे छिपा हनुमान चालीसा का पाठ कर रहा था। घर मे चारो ओर बत्तिया का प्रकाश फैल गया था। चोर चोर की आवाज सुनकर सारा मोहल्ला इकट्ठा हो चुका और मेरी सास और साली को देखकर मद मद मुस्करा रहा था। मेरी साली ने मेरी सास को और मेरी सास ने साली को बताया कि चहरे पर काला रग पुता हुआ है। दानो गुसलखाने की ओर श्याम रग छुडान के लिए भागी। मोहल्ला सोच मे पड गया कि ऐसा कौन सा चोर था जो होली खेलने आया था। रुपया चोर, दिल चोर और टैक्स-चोर के बारे मे तो मोहल्ले ने सुना था परतु होली चोर के बारे मे पहली बार जाना था। इधर गुसलखाने मे घुसने को उत्सुक भारत नारिया मुझे देखते ही भूत भूत के नारे लगाती हुई उलटे पाव लौटी। मोहल्ले की वृद्धिया न भूत का नाम सुनते ही राम भजन आरभ कर दिया, बच्चे मा के आचल म छुप गये और युवक लाठिया लेकर भूत के दशन करने चल दिये।

मैं समझ गया कि भक्तो को दर्शन देने का उचित समय आ गया है। अगर अब भी मैं गुसलखाने से बाहर नही निकला तो लाठियो की वो बौछार होगी कि मेरे खून का रग सबको पता चल जायेगा। यह सोचकर मैंने, "मैं हू मैं हू मुझे लाठी मत मारना, मैं प्रेम हू" कहकर चिल्लाना शुरू कर दिया। और मैं गुसलखाने से बाहर निकला। मोहल्ले ने मेरी हालत देखी तो हसी का फव्वारा छूट गया। बूढी औरतें राम नाम का जाप छोड पोपली हसी हसने लगी। बच्चे आचल से निकल किसी जतु को देखने के भाव से मैदान मे आ गए और युवक लाठिया जमीन पर पटक पटककर अट्टहास करने लगे। मैं उल्लू-सा अपनी सास और साली की ओर देख रहा था। मेरा सारा शरीर रगीन पानी से निचुड रहा था और मेरा हृदय घाम से पानी पानी हो रहा था। लोग मुझसे पूछ रहे थे, "क्या हुआ? क्या हुआ?" और मैं निरुत्तर बटेर की तरह इधर उधर देख रहा था।

अगले दिन ससुराल मे मैंने जो होली खेली, वह होली नही थी, होली की औपचारिकता थी। अपनी सास से आख मिलाने का साहस नही हो रहा था। सालियो की आखें बार बार मुस्करा उठती थी और जब मैं पत्नी समेत ससुराल से चलने लगा तो साली ने कहा, "जीजा फिर आइयो खेलन होली।"

उससे फ्लैट मे 'बुद्ध बक' करवाना ही विवेक है। समाजशास्त्री ने समझाया कि नई कालोनी मे दो वर्ष बाद जाना ही उत्तम है। दो वर्ष मे बस और बाजार की सुविधायें बढ जाती हैं और बसावट भी हो जाती है। कानून वेत्ता ने अभय दान देते हुए कहा कि दो वर्ष के लिए एग्रीमेंट करवाकर देने से कोई खतरा निकट नही आता है। धार्मिक ने बताया कि हनुमान जी को हर मंगलवार प्रसाद चढाने से भूत पिशाच निकट नही आते हैं। जनसेवक ने आश्वासन देते हुए कहा—हमारे होते हुए आप क्यो चिंता करते है। इतने सारे कार्यकर्ता अब काम आयेंगे। साले ने तीन पाच की तो उठवा न दिया तो कहिएगा।" इतने सारे शुभचिंतक हो तो आदमी भ्रष्टाचार से युद्ध कर सकता है यहा तो मुकाबले मे किरायेदार था।

पर्याप्त गभीर चिंतन मनन के पश्चात् पारिवारिक निर्णय हुआ कि स्वय त्यागी (रवीद्रनाथ, नही) बनकर किरायेदार को दो वर्ष के लिये अपने फ्लैट का सुख उठाने का सुअवसर प्रदान किया जाय।

जसे महान भारतभूमि मे भ्रष्टाचार सवत्र सुलभ है वसे ही एक ढूढो तो दस के अनुपात म किरायेदार सुलभ हैं। परन्तु जैसे ईमानदारी और नैतिकता गजे के सर पर बाल की तरह अलभ्य हैं वसे ही अच्छा किरायेदार भी। यह ज्ञान हमे पर्याप्त भाग दौड के पश्चात प्राप्त हुआ हमारी तपस्या एक दिन रग लाई और हम अपने एक रिश्तेदार के रूप मे अच्छा किरायेदार उपलब्ध हो गया। जिससे दो वर्ष से अधिक के लिए किरायेदार नही बनना था क्योकि दो वर्ष बाद हमारी तरह वह भी फ्लैट लार्ड बनने वाला था।

छाछ को भी फूककर पीने वालों न फिर समझाया कि चाहे रिश्तेदार है उसस अनुबध अवश्य करा लिया जाय। जिस असार ससार मे भाई भाई भू-सपत्ति का सार तत्त्व प्राप्त करने के लिए मुकदमेबाजी करते हो उसम बेचारे दूर के रिश्तेदार को बाद म दोष देना उचित नही है। धारा इक्कीस क आधीन अनुबध न हो पाय तो सब रजिस्ट्रार के यहा अनुबध रजिस्टर करवा लेना अच्छा सुरात्मक कदम है। मैं दूध स नही जला था फिर भी मैंने छाछ को फूका और अनुबध की प्रक्रिया मे जुट गया।

मैंने एक वकील किराये पर लिया, उसने अनुबध का प्रारूप बनाया

मैंने किरायेदार रख्यो

ग्रुप हाउसिंग वाला की कृपा से हमें पश्चिमी दिल्ली में फ्लैट मिल गया था और हम भी 'फ्लैट लार्ड' हो गये थे। (लैंड लार्ड नहीं हो सकते थे क्योंकि फ्लैट वाले जमीन पर खड़े तो होते हैं परन्तु जमीन उनकी नहीं होती है।) दिल्ली जैसे शहर में आपके ऊपर छत हो और नीचे अपना वाहन तो आधी समस्यायें हल हो जाती हैं जनता जनार्दन के अनुसार हमारी भी हो गई थी।

जब तक फ्लैट नहीं मिला था, उसके न होने की चिंता सालती रहती थी, मिल गया तो उसके होने ने चिंता में डाल दिया, चिंता की पहली रेखा यह भी थी कि *फ्लैट को किराये पर देकर स्वयं किराये पर रहकर दक्षिण* दिल्ली में रहने का गर्व उठाया जाय। चिंता की दूसरी रेखा यह थी कि फ्लैट में स्वयं रहा जाय और पश्चिमी दिल्ली के प्रेमी मच्छरों द्वारा काटने का सुख उठाया जाय।

पत्नी कुछ दिन किराये के मकान में रहकर मकान मालकिन होने का गौरव पाना चाहती थी।

दूध के जलों ने किरायेदारों के बारे में हमें ऐसे-ऐसे अनुभव सुनाए कि छाछ भी हमें जहर लगने लगी, उसे फूंक फूंककर पीने की बात दूर थी। किरायेदार हमें ऐसा राक्षस लगने लगा जो छल से, पहले सुंदर राजकुमार का रूप धारण कर किसी राजकुमारी को फंसाता है और फंस जाने पर अपना असली राक्षसी रूप में आ जाता है। किरायदार शब्द से ही हमें डर लगने लगा। नफरत होने लगी। *यह दीगर बात है कि उस समय हम स्वयं* एक शरीफ और ईमानदार मकान मालिक के किरायेदार थे।

प्राणी वैज्ञानिक ने समझाया कि पांचों अंगुलियां बराबर नहीं होतीं हैं, अतः ऐसे में किरायेदार को भी अंगुली समझकर व्यवहार करो। अर्थ-शास्त्री ने हमें समझाया कि दो वर्ष तक किराये का अर्थलाभ उठाकर

उससे फ्लैट मे 'वुड वर्क' करवाना ही विवेक है। समाजशास्त्री ने समझाया कि नई कालोनी मे दो वर्ष बाद जाना ही उत्तम है। दो वर्ष मे बस और बाजार की सुविधायें बढ जाती हैं और बसावट भी हो जाती है। कानून वेत्ता ने अभय दान देते हुए कहा कि दो वर्ष के लिए एग्रीमेंट करवाकर देने से कोई खतरा निकट नही आता है। धार्मिक ने बताया कि हनुमान जी को हर मंगलवार प्रसाद चढाने से भूत पिशाच निकट नही आते हैं। जनसेवक ने आश्वासन देते हुए कहा—हमारे होते हुए आप क्या चिंता करते है। इतने सारे कार्यकर्ता अब काम आयेंगे। साले ने तीन पांच की तो उठवा न दिया तो कहिएगा।" इतने सारे शुभचिंतक हो तो आदमी भ्रष्टाचार से युद्ध कर सकता है यहा तो मुकाबले मे किरायेदार था।

पर्याप्त गंभीर चिंतन मनन के पश्चात पारिवारिक निर्णय हुआ कि स्वयं त्यागी (रवीन्द्रनाथ, नही) बनकर किरायेदार को दो वर्ष के लिये अपने फ्लैट का सुख उठाने का सुअवसर प्रदान किया जाय।

जैसे महान भारतभूमि मे भ्रष्टाचार सर्वत्र सुलभ है वैसे ही एक ढूढो तो दस के अनुपात मे किरायेदार सुलभ हैं। परन्तु जैसे ईमानदारी और नैतिकता गंजे के सर पर बाल की तरह अलभ्य हैं वैसे ही अच्छा किरायेदार भी। यह ज्ञान हम पर्याप्त भाग दौड के पश्चात प्राप्त हुआ हमारी तपस्या एक दिन रंग लाई और हमे अपने एक रिश्तेदार के रूप मे अच्छा किरायेदार उपलब्ध हो गया। जिससे दो वर्ष से अधिक के लिए किरायेदार नही बनना था क्योंकि दो वर्ष बाद हमारी तरह वह भी फ्लैट लार्ड बनने वाला था।

छाछ को भी फूककर पीने वालो ने फिर समझाया कि चाहे रिश्तेदार है उससे अनुबंध अवश्य करा लिया जाय। जिस प्रकार संसार मे भाई-भाई भू-सपत्ति का सार तत्त्व प्राप्त करने के लिए मुकदमेबाजी करते हो उसमे बेचारे दूर के रिश्तेदार को बाद मे दोष देना उचित नही है। धारा इक्कीस के आधीन अनुबंध न हो पाय तो सब रजिस्ट्रार के यहा अनुबंध रजिस्टर करवा लेना अच्छा सुरात्मक कदम है। मैं दूध से नही जला था फिर भी मैंने छाछ को फूका और अनुबंध की प्रक्रिया मे जुट गया।

मैंने एक वकील किराये पर लिया, उसने अनुबंध का प्रारूप बनाया

और उसे डेढ सौ रुपये के स्टाम्प पेपर पर टाईप करवाने का निर्देश दिया। फ्लैट लाड बनने की प्रक्रिया मे गैर भ्रष्टाचारी और गैर-कालाधधाकारी मध्यवर्गीय मनु-पुत्र आर्थिक रूप से इतना खस्ता हो जाता है कि कजूस पुत्र बन जाता है। मैंने भी बचत की दृष्टि से प्रारूप को स्वय ही टाईप करने का निणय ले लिया।

नियत दिन मे, मेरा किरायदार और ग्रुप हाउसिंग के सचिव महोदय अनुबध सहित, नौ बजे वकील महोदय की शरण म पहुचे वकील महोदय स्वय को बहुत व्यस्त प्रदर्शित कर रहे थे। उन्होने हम तीनो को अनुबध के कागजो पर हस्ताक्षर करने के निर्देश दिये और स्वय पुन व्यस्त प्रदर्शन मे डूब गये। हम तीनो ने बारी बारी से अच्छे बच्चो की तरह हस्ताक्षर कर दिये।

वकील महोदय ने हस्ताक्षर वाले अनुबध को लापरवाह दृष्टि से देखा और फिर मेरे हस्ताक्षरो की ओर इगित करके बोले, "यह सिगनेचर किस के हैं, बहुत अजीब से लग रहे हैं।'

' मेरे हैं, क्या अजीब लग रहे हैं?" मैंने पूछा।

"कुछ नही। वड म कुछ हिंदी जैसे लग रहे थे पर आप तो लेक्चरर हैं आप कहा हिंदी म '

'यह हिंदी मे ही हैं वकील साहब। मैं अपने हस्ताक्षर सदा अपनी राष्ट्रभाषा मे ही करता हू," मैंने गव से मस्तक ऊचा करते हुए कहा।

"हिंदी मे।" वकील महोदय के मुह से जसे नीम चढा करेला घुस गया था। उनक मस्तक पर चिंता की पहली दूसरी तीसरी चौथी अनेक रेखायें खेलने लगी।

"क्या, क्या गडबड है" गव स मरा मस्तक ऊचा था परन्तु मन शकित हो गया।

"वकील महोदय ने सिगरेट का जोर स कश खीचा और धुआ उगलते हुए कहा, "हा, हिंदी म सिगनेचर के साथ अगूठा लगाना पडता है, आपको "

"मैं अगूठा। मैं आपको अनपढ दिखाई देता हू, एम०ए०पी-एच०डी० हू, वकील साहब।" मेरा आक्रोश फूटा।

"माफी चाहता हू, नियम यही कहता है । पर आप घबरायें मत, आप के सिगनेचर देखकर कोई नही कह सकता है कि यह अग्रेजी के नहीं हैं। वैसे क्लर्क को पाच का नोट देंगे, सब हो जायेगा। डोंट वरी " (डोंट वरी—हिंदी मे काम करना आरम्भ कीजिय। धीरे धीरे सब कठिनाई दूर हो जायेगी)।

हे राष्ट्रभाषा तू धन्य है जिसके कारण एम०ए०पी एच०डी० अगूठा छाप हो जाता है। हे राष्ट्रभाषा तू महान है जो पाच रुपये के सहारे चल जाती है।

वकील महोदय और श्रीमान रुपये की सहायता से हम सब रजिस्ट्रार के दर्शन करने मे सफल हो गये। सब-रजिस्ट्रार निर्विकार ईश्वर की तरह लग रहे थे। हमे देखते ही उनमे विकार पैदा हुआ और उन्होने हम तीनो को उडती निगाह से देखा, कागजो पर लापरवाह दृष्टि डाली और वकील से आखें चार की। कुछ देर तक अनुबध के कागजो को पलटने के बाद उसे अचानक बोले, "यह आपने क्या किया है?"

मैंने कोई, हत्या, चोरी, डकती या बलात्कार नही किया था। फिर भी मुझमे अपराध भावना आ गई और मैंने पूछा, "क्यो सर, क्या हो गया?"

" स्टैम्प पेपर तो ठीक हैं, बाकी मैटर आपने बाड पेपर पर क्यो टाईप करवाया है। यह नही चलेगा। मैटर दोबारा टाईप करवा कर लाइय।" यह कहकर उन्होने अनुबध के कागज मेज पर फेंक दिये और निर्विकार हो गये। मैंने अपनी तरफ से सुदर टाईप किया था, अच्छे कागज पर। सुदरता ने मुझे फसा दिया।

मैंने विनयपत्रिका प्रस्तुत करते हुए कहा, "सर, दोबारा टाईप करवाने मे समय और धन दोनो लगेगा। बडी मुश्किल से आज की छुट्टी की है तीनों ने।

'देखिये धन तो लगेगा ही, समय कैसे बचाना है, यह आपको सोचना है।" निर्विकार ईश्वर ने सूत्र छोडा।

वकील महोदय ने रिश्वती दृष्टि मेरी आखो मे डाली, मैंने कहा, "सर, अगर दस-पाच रुपये मे कुछ बात बन सकती हो तो "

"आपने मुझे चपरासी समझा है क्या ?" वह गुर्राया (घर मे कुत्ता भी)

मुझे समझ नही आया कि इस प्रक्रिया मे वह सब रजिस्ट्रार से चपरासी कैसे हो गये । रिश्वत तो चपरासी से लेकर मत्री तक को एक आख से देखती है । कही यह जीव रिश्वत द्रोही तो नही । रिश्वत की बात करके कही मैंने इसका आदरणीय पद गिरा तो नही दिया । साफ सुथरी सरकार के साफ सुथर सब रजिस्ट्रार के प्रति मेरे मन मे सम्मान उमडने लगा परन्तु अधिक उमड नही पाया । वकील महोदय धर्मयुद्ध मे कूद पडे, बोले, "साहब, बीस ठीक है ।"

"नही पच्चीस '

वकील साहब ने मुझ पर दृष्टि डालकर पच्चीस के माग पर चलने का सकेत किया । अक्लमद को इशारा काफी होता है मुझे भी बहुत था । मैंने कहा, ' सर, बाहर चलिये वहा आपके चाय पानी का इतजाम करते "

"यहा ठीक है ।" उन्होंने बडे लापरवाह से कहा, और अनुबध के कागजो पर हस्ताक्षर करने आरम्भ कर दिये । वह स्थितप्रज्ञ योगी से अपने 'ध्यान' मे डूबे थे और मैं लाल बुझकड-सा आश्चय से मुह फाडे न्याय के आगन मे नगा नाच देख रहा था ।

मैं मूख था इसलिए चकित हुआ था । उस हमाम म तो सभी नगे थे, कौन किसी की तरफ देखता, अगुली उठाता । गलती तो मेरी ही थी, कि मैं बार बार अपनी खिसकती हुई पैंट ठीक कर रहा था । मैंने उन्हें उनका मेहनताना दिया । उन्होंने सहज भाव से ग्रहण किया परतु न जाने क्यों उनके पीछे लिखे शब्द—सत्यमेव जयते, सहज नही थ, मुस्करा रहे थे । सत्य को मुस्कराने का अधिकार है क्या ?

कजंक्टिवाइटिस आयोग

कॉलेज से पढ़ाकर लौटा तो पड़ोसी जोशी जी को बनियान पायजामे में, आंखों पर धूप का चश्मा पहने खड़ा देखा। उनकी इस राष्ट्रीय पोशाक पर काला चश्मा असंगत लग रहा था। इस समय उनका घर पर दिखना भी असंगत लग रहा था। क्योंकि इस समय उन्हें दफ्तर में होना चाहिये। इससे पहले कि मैं अपनी जिज्ञासा का कोई समाधान पाता, जोशी जी ने मुझे देखते ही नेताई हंसी हंसे और बोले, "क्यों आपको भी हो गया था ?"

मैं आश्चर्यचकित कि मुझे 'वो' क्या हो गया है, जिसका मुझे पता तक नहीं है। मैंने अपनी शंका प्रकट की, "क्या हो गया मुझे जोशी जी ?"

"अरे वही कजंक्टिवाइटिस आंखों की छूत की बीमारी नेत्र रोग। मुझे भी आज सुबह ही हुई सेक्शन में श्रीवास्तव को थी बस उसी से गलती से हाथ मिला लिया था अब तो सारे सेक्शन को होगी। बड़ी नामुराद बीमारी है। आप भी फंस ही गये। काला चश्मा चढ़ ही गया आपको ?"

"मुझे कुछ नहीं हुआ है जोशी जी। यह चश्मा मैंने धूप और धूल से बचने के लिए लगाया है। स्कूटर चलाते समय आंखों में हवा नहीं लगती है। आपकी कृपा से मैं इस बीमारी से बचा हुआ हूं।"

'आपको नहीं हुई है, अच्छा है" वह बहुत मायूस हो गये थे। जितने उत्साह से वह मिले थे उतनी मायूसी से वह घर के अन्दर जाने के लिए भारी पग उठाने लगे। मैंने देखा उन्होंने रूमाल से अपनी आंखों को पोंछा भी। उनकी बिरादरी घट गई थी। मेरे धूप के चश्मे ने उन्हें धोखा दिया था।

"क्या जमाना आ गया है। लोग तो लोग अब चश्मे भी धोखा देने लगे हैं।" मैं बुजुर्ग की तरह जमाने को कोसने लगा। एक जमाना था कि

लोग धूप में चश्मे के सौंदय से प्रभावित होते थे और एक जमाना यह है कि चश्मेधारी को देखकर घबराते हैं। उसे काली बिल्ली समझकर रास्ता बदल लेते हैं। चश्माधारी पुकारे तो बहरे हो जाते हैं, सामने आये तो अंधे हो जाते हैं छुए तो स्पर्शहीन हो जाते हैं।

डी०टी०सी० की बस में इसके कारणों पर चर्चा हो गई। डी०टी० सी० से बढ़कर, सामयिक विषयों पर चर्चा का मंच और कोई देखने को नहीं मिल सकता। पंजाब समस्या हो या नेत्र समस्या, जनता के विचार तुरंत उपलब्ध हो जाते हैं। मंच चर्चा

"यह तो हाथ मिलने भर से हो जाती है। जहां आपने हाथ मिलाया वहां कीटाणु आप तक पहुंचे। इसलिए ही तो अपनी भारतीय संस्कृति की नमस्ते अच्छी, न हैलो न केला सिर्फ हाथ जोड़कर नमस्कार।" यह कह कर सज्जन ने नमस्कार की मुद्रा ग्रहण कर ली।

"आप सौ पैसे सही कह रहे हैं बड़ी गंदी बीमारी है। किसी को टोक भर दो तो हो जाती है। मुझे तो ऐसे ही हुई।"

कोई कुछ बोल रहा था, कोई कुछ। बेचारा कंडक्टर भी ताजा ताजा इस रोग में फंसा टिकटें बांट रहा था। इसी बीच एक तिलकधारी बोले, "मैं बताऊं सोलह आने कि कैसे होती है। यह सब बुरे कर्मों का फल है। पृथ्वी पर पाप बढ़ गया है। लोग बुरे कर्मों में फंसे हुए हैं। ईश्वर का स्मरण नहीं करते हैं। बुरी चीज पर नजर डालने से ही बुराई आती है।" यह कहकर वह पास खड़ी बाला के पास और सरक गये।

यह प्रवचन सुनते ही कंडक्टर को क्रोध आ गया, बोला, "मैंने क्या पाप किया जो 'यह' हो गई भगत।"

"कुछ तो किया होगा। बिना बुरे कर्म के ईश्वर कष्ट नहीं देता है। मैं तो रोज हनुमान चालीसा का पाठ करता हूं भगवान का भजन करता हूं। मुझे तो नहीं हुई और न होगी। कोई चाहे तो लिखवा ले।'

कंडक्टर को ताव आ गया। वह खड़ा हुआ और अपना चश्मा उतार कर बोला, 'देख देख मेरी आंखों में देख। मैं देखता हूं तेरा भजन-कीर्तन क्या करता है देख।"

इस बीच नेत्र रोग से पीड़ित एक यात्री ने पहले अपने नेत्रों पर हाथ

लगाया और फिर भगत जी के नेत्रो पर मलते हुए बोला, "जा बच्चा कंजक्टिवाइटिस तेरा कल्याण करेगा।"

इतना होना था कि देश की प्रगति रुक गई। भगत जी दुष्टो का सहार करने के लिए मदान मे उतरे और ड्राइवर ने बस रोक दी।

इस तरह इस नेत्र रोग के चक्कर अजब-अजब हैं। अगर कुछ पिट रहे हैं, अछूत बने हुए दु खी है तो कुछ के लिए यह लाली ईश्वर का वरदान हैं। ऐसे जीवन महान हैं जो बीमारी मे से लाभ ढूढ लेते हैं।

बॉस बडा अडियल है, छुट्टी नही देता है और राम अवतार को फिल्म देखने जाना है। राम अवतार धूप का चश्मा धारण करता है, बॉस के कमरे म जाकर कहता है, "सर मुझे 'वो' हो गया है, दिखाऊ।"

"नही नही नही, तुम घर जाओ जल्दी। बॉस की मजाल कि राम अवतार की ओर आख उठाकर देख भी ले।"

उधार चुकाने वाले धूप का चश्मा पहन निधडक घूम रहे हैं। उधार लेने वाले दूर से नमस्कार करके कहते हैं, अच्छा आपको 'वो' हो गया है। अगले हफ्ते मिलूगा। मकान मालिक दरवाजे से ही लौट रहा है। घर सुरक्षित हो गया है। पडोसियो की बुरी नजर से बचा हुआ है।

सुनने मे आया है कि गृहणिया को खाना न पकाने के लिए बहाना मिल गया है। पति खाना बना रहा है, होम वर्क करा रहा है और बच्चो को, सुरक्षा की दृष्टि से अपने साथ सुला रहा है।

जिधर देखता हू उधर 'वो' ही छाया हुआ है। भारत मे हर बुरा रोग छूत की तरह बढता है। बाढ, सूखा, भ्रष्टाचार, रेल दुर्घटनाये, आतकवाद जैसे राष्ट्रीय रोगो मे एक रोग और जुड गया है। भारत मे नेत्र रोग तेजी से फैल सकता है, प्रेम रोग नही।

कुछ भी हो यह एक राष्ट्रीय समस्या बन गई है। हमारे यहा राष्ट्रीय समस्या का हल नही, उससे समझौता का रिवाज है। यह बीमारी भी समझौते से दूर की जा सकती है।

आदमी के बच्चे

"तुम कौन हो ?"

"रामू।"

'रामू तुम्हारा भी नाम होता है क्या ? पापा तो तुम लोगो को सिर्फ गरीब कहते हैं। मेरे पापा कहते हैं गरीब लोग गदे रहते हैं । तुमने इतने गदे कपडे क्यो पहने है ?"

"पैसे नही हैं।"

"तुम नहाते भी नही हो क्या ? हमारा तो टामी भी रोज नहाता है, हमारी आया नहलाती है, मुझे भी वही नहलाती है। तुम्हारी आया नही नहलाती ?"

"आया ! आया कौन ?"

"वो जो घर का सारा काम करती है—नौकरानी।" तुम्हारे यहा नौकरानी नही है क्या ?

"है ऽ ऽ, मेरी मा नौकरानी है वो ही घर का सारा काम करती है। दूसरो के घर मे भी काम करती है।"

"तुम सारा दिन कैसे खेलते रहते हो ? तुम्हारे यहा ट्यूटर नही आता है क्या ? होम वर्क नही करना पडता क्या ? तुम स्कूल नही जाते हो क्या ?

"नही बापू के पास स्कूल भेजने के लिए पसे नही हैं। टोली, कालू, गोली, रमती—कोई भी स्कूल नही जाता है। बडे होकर हमे मजूर बनना है। बापू कहते हैं, मजूर बनने के लिए पढना नही होता है, बस बडा होना होना है।"

' पापा मुझे तुम्हारे साथ खेलने को सख्त मना करते हैं। कहते हैं तुम लोग गटर म पलने वाले कीडे हो। पर तुम तो मेरे जैसे लगते हो, बस, गदे कपडे पहनते हो। हमारी टीचर कहती हैं आदमी का खून लाल होता है,

तुम्हारा भी है क्या ?"

"हा, देखो।" और उसने अभी-अभी खेल मे लगी चोट से रिसता खून का रंग दिखा दिया।

"अरे ! तुम्हें तो चोट लगी है, जल्दी डिटोल से साफ कर लो, डाक्टर से टिटनेस का टीका लगवा लो, नही तो सैप्टिक हो जायेगा।"

"कुछ नही होगा, ऐसे तो रोज लगती रहती है।"

"तुम तो बहुत बहादुर हो। मुझे पापा से बहुत डर लगता है। वो मुझे हरदम पढने को कहते हैं, घर के अन्दर खेलने को कहते हैं। बाहर नही जाने देते हैं। पापा जितना बडा होकर मैं तुम्हारे साथ खेलने बाहर आ सकूगा।"

"नहीं, तब भी तुम नही आ सकोगे।"

"क्यों ?"

"तब तुम पापा बन जाओगे।"

प्रमाण पत्र

पहला, "नमस्कार, भाई साहब ! मुझे अपने बच्चे के जन्म का प्रमाण पत्र चाहिए।"

दूसरा, 'ठीक है, इस फार्म को भरकर एक रुपया जमा कर देना, पंद्रह दिन बाद मिल जायेगा।"

पहला, "पंद्रह दिन मे ! मुझे तो जल्दी चाहिए, एडमिशन फार्म के साथ देना है।"

दूसरा, "आप लोग ठीक समय पर जागते नही हैं और हमे तग करते हैं। ठीक है। बडे बाबू से बात करनी होगी, दस रुपये लगेंगे। एक हफ्ते मे सर्टिफिकेट मिल जायेगा।'

पहला, "भाई साहब मुझे दो दिन मे चाहिए, आप कुछ कीजिए न प्लीज।"

"दूसरा, ठीक है, बीस दे दीजिए, लच के बाद ले जाइयेगा।"

पहला, मैं विजिलस से हू, तो तुम रिश्वत लेते हो!"

"दूसरा, "हुजूर माई-बाप हैं यह आज की कमाई आपकी सवा मे हाजिर है।"

पहला, "गलत काम करते हो और हम तग करते हो। तुम्हें सस्पड भी किया जा सकता है।'

दूसरा, 'हुजूर, एक हजार और दे दूगा।'

पहला, "तुम मुझे धम सकट मे डाल रहे हो, मुझे तुम्हारे बाल-बच्चों का ध्यान आ रहा है, परतु डयूटी इज ड्यूटी।"

पहला, ठीक है, ठीक से काम किया करो। आदमी को पहचानना सीखो। मुझसे मिलते रहा करो। तुम जैसे पुराने कर्मचारियों की देश को बहुत आवश्यकता है।"

यह कहकर उसने हाथ मिलाया, संधि पर हस्ताक्षर किये और देश तीव्रता से प्रगति करने लगा।

मागने वाले

वह आधे घटे से प्रतीक्षा म इस बहुमजिला इमारत के दरवाजे पर खड़ा हुआ है। उसे प्रतीक्षा है कम्पनी के मैनेजिंग डायरेक्टर खोसला की। उसे नौकरी चाहिए और यह नौकरी उसे खोसला साहब ही दिलवा सकते हैं। पहले उसे अपनी योग्यता पर बड़ा गव था। उसने मित्रो के सामने कई बार दावा किया था कि वह नौकरी अपनी योग्यता के बल पर ही लेकर दिखाएगा। परन्तु पारिवारिक जिम्मेदारियो और बेरोजगारी ने उसके सिद्धाता और गव को तोड दिया। आज के थी खोसला के नाम किसी का पत्र थामे प्रतीक्षा मे खडा है।

श्री खोसला की कार उसने दूर से ही देख ली। वह इमारत के दरवाजे पर पहुचा। कार रुकते ही उसने ड्राइवर से पहले कार का दरवाजा खोला और 'गुड मानिंग' कहते हुए खोसला साहब के सामने धनुषाकार मे झुक गया। वह इस कदर झुक गया था कि जैसे उसके शरीर से रीढ की हड्डी गायब हो गई हो। तभी उसने महसूस किया कोई उसे स्पर्श कर रहा है, उसने एक आवाज भी सुनी, "बाबूजी बाबूजी बच्चा भूखा है सिफ दस पैसे दे दो भगवान तुम्हारा भला करे।"

उसने देखा उससे थोडा हटकर मैले कपडो मे लिपटी, अधनगे पेट-फूले बीभत्स बच्चे को गोद म उठाए भिखारिन उसकी ओर याचना भरी दृष्टि से देख रही है। उसे बहुत क्रोध आया। उसने भिखारिन को दुतकारते हुए कहा, "भाग यहा से कोई काम धाम नही है।" और इस बीच खोसला साहब कार से बाहर निकले तो वो उनके लिए रास्ता बनाता हुआ भिखारिन के आगे इस अदाज म खडा हो गया जिससे उस बीभत्स भिखारिन पर खोसला साहब की दृष्टि न पडे। खोसला साहब आगे बढे तो वो भी लगभग उनके पीछे दौडता हुआ साथ हो लिया। उसने कापते हाथो

ने गिरधारी पत्र लोगला साहब को देते हुए कहा, 'प्लीज़ सर, यह गुरी साहब ने दिया है। प्लीज़ सर देखिएगा। मैं बड़ी मुश्किल में हूं सर, घर में कोई और कमाने वाला नहीं है—सर, प्लीज़ यह नौकरी मुझे मिल जाए तो ज़िन्दगी भर मैं आपका एहसान मानूंगा सर, प्लीज़।'

लोगला साहब ने 'हूं' कहा और चपरासी के साथ निकल गए।

भगतो की महिमा

किसी ने कहा है—'सच्चाई छुप नही सकती बनावट के उसूलो से, खुशबू आ नही सकती कभी कागज के फूलो से।' परन्तु आजकल जो खुशबू कागज के फूलो से आती है, उसके सामने ताजे फूलो का सत्य शरमा जाता है। ऐसे ही एक दिन मैं भी शरमा गया था।

मेरी फाइल आगे खिसक नही रही थी। मुझे घर बनवाने के लिए ऋण चाहिए था। पता चला कि जिन अधिकारी के पास फाइल रुकी हुई है वह बड़े भक्ति भाव के प्राणी हैं। दफ्तर मे भी धूप अगरबत्ती जला कर हनुमान जी की पूजा अचना करते रहते हैं। मुझे आशा बधी। यदि मैं अपने कष्टो का वणन एक भक्त के सामने करूगा तो वह अवश्य मुझ पापी का उद्धार करेंगे। अत एक मगलवार को मैं उनके पास पहुच गया।

मैं उनके पास दफ्तर खुलते ही पहुचा था। पता चला कि आज मगलवार है इसलिए भगत जी एक घटा लेट आएगे। मगलवार को वह हनुमान मन्दिर होकर दफ्तर आते हैं। मैंने उसकी मेज के वातावरण का निरीक्षण किया तो पाया कि सारा वातावरण हनुमानमय था। मेज पर हनुमान जी का विशाल चित्र पड़ा था। कुर्सी के पीछे दीवार पर एक छोटा-सा हनुमान मन्दिर सुशोभित हो रहा था और फाइलो के ऊपर हनुमान चालीसा की एक प्रति पड़ी हुई थी।

लगभग दो घण्टे की प्रतीक्षा करवाने के बाद भगत जी ने मुझ पापी को दशन दिए। सफेद कुर्ता पायजामा पहने, माथे पर तिलक लगाए वह हनुमान चालीसा का पाठ करते हुए प्रविष्ट हुए थे। उनके प्रविष्ट होते ही पापी सुन्दरियो ने दुपट्टे मे मुह दबा कर खी खी करना शुरू कर दिया और जिनके पास दुपट्टा नही था उन्होने हाथ मे मुह दबा लिया। पुरुषो ने शरारती निगाहो से एक-दूसरे को देखा और अपने काम मे जुट गए। भगत जी ने पापी ससार की परवाह नही की और भक्ति भाव से अपनी सीट पर

ने चिरचिरी एक सोमता साहब को देते हुए कहा, 'प्लीज़ सर [illegible] यह पूरी शाख़ में लिखा है [illegible] प्लीज़ सर देखिएगा [illegible] मैं बड़ी मुश्किल में हूँ सर यह [illegible] दाईं ओर लगाने वाला नहीं है—सर [illegible] प्लीज़ यह नौकरी मुझे मिल जाए तो [illegible] ज़िन्दगी भर मैं आपका एहसान मानूँगा सर [illegible] प्लीज़।

सोमता साहब ने [illegible] हूँ कहा और चपरासी के साथ [illegible] चला गया।

भगतो की महिमा

किसी ने कहा है—'सच्चाई छुप नही सकती बनावट के उसूलो से, खुशबू आ नही सकती कभी कागज के फूलों से।' परन्तु आजकल जो खुशबू कागज के फूलो से आती है, उसके सामने ताजे फूलो का सत्य शरमा जाता है। ऐसे ही एक दिन मैं भी शरमा गया था।

मेरी फाइल आगे खिसक नही रही थी। मुझे घर बनवाने के लिए ऋण चाहिए था। पता चला कि जिन अधिकारी के पास फाइल रुकी हुई है वह बड़े भक्ति भाव के प्राणी है। दफ्तर मे भी धूप अगरबत्ती जला कर हनुमान जी की पूजा-अर्चना करते रहते हैं। मुझे आशा बधी। यदि मैं अपने कष्टो का वर्णन एक भगत के सामने करूगा तो वह अवश्य मुझ पापी का उद्धार करेंगे। अत एक मगलवार को मैं उनके पास पहुच गया।

मैं उनके पास दफ्तर खुलते ही पहुचा था। पता चला कि आज मगलवार है इसलिए भगत जी एक घटा लेट आएगे। मगलवार को वह हनुमान मदिर होकर दफ्तर आते हैं। मैंने उसकी मेज के वातावरण का निरीक्षण किया तो पाया कि सारा वातावरण हनुमानमय था। मेज पर हनुमान जी का विशाल चित्र पड़ा था। कुर्सी के पीछे दीवार पर एक छोटा-सा हनुमान मदिर सुशोभित हो रहा था और फाइलो के ऊपर हनुमान चालीसा की एक प्रति पड़ी हुई थी।

लगभग दो घण्टे की प्रतीक्षा करवाने के बाद भगत जी ने मुझ पापी को दर्शन दिए। सफेद कुर्ता पायजामा पहने, माथे पर तिलक लगाए वह हनुमान चालीसा का पाठ करते हुए प्रविष्ट हुए थे। उनके प्रविष्ट होते ही पापी सुन्दरियो ने दुपट्टे मे मुह दबा कर खी खी करना शुरू कर दिया और जिनके पास दुपट्टा नही था उन्होने हाथ मे मुह दबा लिया। पुरुषो ने शरारती निगाहो से एक-दूसरे को देखा और अपने काम मे जुट गए। भगत जी ने पापी ससार की परवाह नही की और भक्ति भाव से अपनी सीट पर

पहुंच गए। मैं सोने से जगा था।

मैंने कहा, "वो मेरी हाउस-लोन की फाइल आपके पास पड़ी है।"

भगत जी ने मेरी बात का ध्यान नहीं दिया और बोले, "जै हनुमान ज गुसाईं," उनके नेत्र बंद थे।

मैंने कहा, "मैं उस फाइल के सिलसिले में आपके पास आया हूं।"

भगत जी बोले, "भूत पिशाच निकट नहीं आवैं, महावीर जब नाम सुनावैं।"

मैं समझ गया कि वह मुझे भूत पिशाच से कम नहीं समझ रहे हैं। मैं उनकी हनुमान भक्ति में बाधक बन रहा था। मैं हार कर कुर्सी पर बैठ गया और उनकी साधना पूरी होने की प्रतीक्षा करने लगा। उन्होंने दरार पास मंदिर में धूप अगरबत्ती जलाई, मेज पर पड़ी हनुमान जी की मूर्ति को प्रणाम किया और तीसरी बार हनुमान चालीसा का पाठ करने के बाद मेरी ओर कृपा-दृष्टि डाली।

भक्ति करते हुए भगत जी जितने सौम्य नजर आ रहे थे, अब नहीं और वह उतनी ही क्रूर दृष्टि से देख रहे थे।

भगत जी बोले, "आपको तमीज नहीं है। जब कोई आदमी काम कर रहा हो आप उसे डिस्टर्ब करते हैं।

जमाकर बोले, "तुम्हारे रास्ते मे तो मगल क्रूर दृष्टि डाल रहा है। काय होने में सदह है।"

"कोई उपाय प्रभु ?"

"हनुमान जी की भक्ति करो। उनके मदिर मे कुछ सेवा चढाओ।"

"मैं आज ही जाकर सवा पाच रुपये का प्रसाद चढाऊगा।" मैंने भक्ति भाव स प्रतिज्ञा की।

"सवा पाच रुपये का ?" हनुमान भगत ने मुझ पर तुच्छ दृष्टि डालते हुए कहा। "लोन साठ हजार चाहिए और प्रसाद सवा पाच रुपये का।"

"फिर आप ही माग दशन करें।" मैंने हाथ जोडते हुए कहा।

"कम से कम दो परसेंट, समझे।"

मैं कसे न समझता। इस समय मेरी समझ के सारे द्वार खुल चुके थ। मुझे उस हनुमान भगत पर अपार श्रद्धा हो रही थी। जब ऐस भक्त अपने भगवान का इतना ध्यान रखेंगे तो हमारे भगवान क्यो न सम्पन्न होंग। मैंने आश्वासन देते हुए कहा, "जमी आपकी आज्ञा प्रभु, मैं आज शाम ही मन्दिर मे प्रसाद चढाऊगा।"

"आज शाम नही, अभी, भगवान सब जगह होते हैं। यहा भी ह और देखिए हनुमान चालीसा की चालीस प्रतिया बाटने की राशि भी दे दीजिएगा आपको बकायदा रसीद मिलेगी। ससार मे बहुत भ्रष्टाचार बढ गया है, कुछ धम का काम कीजिए।"

हनुमान भगत ने मुझे आधे घटे तक बढते भ्रष्टाचार, पाप और धम की हानिलाभ का भाषण पिलाया।

मैंने भाषण पीते हुए देखा कि सफेद कुर्ता पायजामा पहने वह कभी बगुले के आकार मे आ जाते थे और कभी भगत के आकार मे। उनके माथे पर लगा तिलक लाल चोच मे बदल जाता था। मैं मछली बना उन्ह हाथ जोडकर प्रणाम करने की मुद्रा मे बैठा था। अब मुझे सुन्दरिया के खी-खी कर हसने और पुरुषो की शरारती निगाहो का अथ समझ आ गया था। मेरी मजबूरी यह थी कि उन्हें बगुला जानते हुए भी उन्ह सच्चा भगत समझता था।

ऐसे भगतों को समाज बगुला जानते हुए भी सच्चा मानने को विवश

है। और ऐसे भगतो की जनसख्या निरन्तर बढ रही है।

जो भगत हैं, बगुला नही है उसे कोई नही जानता है। परन्तु जो बगुला है वह अपनी भक्ति का ढिंढोरा पीटता है। आजकल जो जितना ढिंढोरा पीटता है। आजकल जो जितना ढिंढोरा पीट सकता है, अपना विज्ञापन कर सकता है, वह उतना ही सच्चा है। सत्य का विज्ञापन करना सत्य बोलने से अधिक सरल है और विश्वसनीय है।

आप किसी को दस बार चाय पिलाते हैं परन्तु उस चाय का ढिंढोरा नही पीटते हैं तो कौन जान पाएगा कि आप चाय पिलाते हैं। परन्तु जो सच्चा बगुला होता है वह एक बार चाय के लिए पूछने का भी विज्ञापन कर डालता है, अपनी दरियादिली का ढिंढोरा पीट देता है। समाज उसे ही दरियादिल समझता है, मान देता है।

जो जन सेवा की भक्ति करता है परन्तु उसे अखबार मे खबर नही बनवाता है फोटो नही छपवाता है, उसे दूर-दूर तक बठे लोग कैसे जान पाएगे। परन्तु जो बगुला ऐसा कर लेता है उसके पास मछलिया स्वय चारा बनने आ जाती हैं।

सच्चे बगुले भगतो के मुह मे सदा राम का नाम होता है और बगल छुरी की म्यान बनी होती है। वह अवसर पाते ही शिकार पर आक्रमण करते हैं और काय पूण होते ही आखें मूद कर राम नाम के सत्य की खोज मे जुट जाते हैं। धन्य हैं ऐसे सच्चे भगत जिनके भरोसे दफ्तरो की फाइलें सरक जाती हैं। कातिल खून करके बच निकलता है और मुझ गरीब को घर बनाने के लिए ऋण मिल जाता है।

हौवा नहीं हौआ

मैं जल्दी म था मुझे अस्पताल पहुचना था, अस्पताल की ओर जाने वाला हर व्यक्ति जल्दी मे होता है, यह अलग बात है कि अस्पताल वाले कभी जल्दी मे नही होते। आपका हाथ टूट गया है, आप दद से कराह रहे हैं और आपको लग रहा है कि आपसे अधिक पीडित व्यक्ति इस दुनिया मे और कोई नही है। आप उम्मीद करते हैं कि आपको पीडा मे देखकर डॉक्टर आपकी मा की तरह चीखता हुआ आपसे लिपट कर कहेगा, "हाय, मेरे मरीज को क्या हो गया ! तेरी यह हालत किसने कर दी मरीज ?" यह कहते हुए डॉक्टर की आखो से आसू बहेंगे और वह सारा काम छोडकर आपकी सेवा म लग जाएगा। पर उसे जल्दी नही है। उसे डॉक्टर सखी से बतरस का आनन्द उठाना है और नर्सों के सौंदय पर रिसच करनी है। डॉक्टर ही क्या, आप पाएगे कि अस्पताल का हर कमचारी अपने मे व्यस्त है। आपको देखने की किसी को भी जल्दी नही है। आप अधिक जल्दी मचाएगे तो वह आपके पेट म कची छोडकर पेट सिल देगा। आपकी हाय तौबा अस्पताल वालो के लिए दूरदशन के कायक्रम की तरह है। यदि आप किसी के द्वारा प्रायोजित हैं तो सारा अस्पताल रुचि के साथ देखेगा, नही तो आप कृपिदशन हो जाएगे कुछ करने को नहीं होगा तो आपको देख लिया जाएगा।

मेरा हाथ नही टूटा था और न ही मैं मरीज होने के कारण जल्दी मे था। जल्दी का कारण मेरा मित्र था। वैसे हुआ उसे भी कुछ नही था, जो कुछ होना था वह उसकी पत्नी को होना था।

वह मेरा मित्र है और सहकर्मी भी। दोपहर को मित्र के घर से फोन आया कि उसकी पत्नी की तबीयत ठीक नही है इसलिए उसे अस्पताल ले जा रहे हैं। उसकी पत्नी मा बनने वाली थी और वह बाप बनने वाला था। फोन सुनते ही उसके चेहरे पर प्रसव-पीडा का दद छा गया। यह दद सुख

का कारण भी बनता है और दुख का कारण भी। वह दो लडकियों का पिता है।

वह मुझे अस्पताल की सीढियो पर मिला था। उसका चेहरा अब भी प्रसव पीडा लिए था। मैंने उत्सुकता दिखाते हुए पूछा, "क्या हुआ ?'

"कन्या रत्न की प्राप्ति हुई है," कहते हुए उसका चेहरा कोयला हो रहा था। उसके चेहर पर पराजित नेता की मुस्कान थी जो जनता को सामने पाकर विवशता मे आती है। मुझे समझ नही आ रहा था कि मैं नवजात शिशु के आगमन की बधाई दू या सहानुभूति प्रकट करू।

"दानो ठीक हैं न ?"

"हा ठीक हैं' वीतरागी योगी के स्वर मे वह बोला। "तू चल मा भी ऊपर है 46 नम्बर कमरा है सैकेंड फ्लोर पर मैं अभी आ रहा हूँ।" और वह भारत की आर्थिक प्रगति सा निर्जीव अपने को आगे धकेलने लगा।

मुझे देखकर मित्र की मा के चेहरे पर ऐसी मुस्कान छायी जसे फोटोग्राफर ने किसी मुर्दे से कहा हो, स्माइलप्लीज, औरवह मुस्करा दिया हो।

उन्होंने कहा, "लक्ष्मी आयी है!" पर लगा जसे लक्ष्मी गयी है।

मैं मा के रूप मे उस हौवा के सामने नतमस्तक हो गया जो एक और हौवा के कारण पीडित थी। धन्य है ऐसी व्यवस्था जिसम औरत औरत की दुश्मन बनने का विवश है। हे महान् पुरुष तू धन्य है जिसने औरत की आखो के पानी का गुणगान किया और औरत की महानता को रोने मे सिद्ध किया।

सुना है आजकल वैज्ञानिको ने ऐसी खोज कर ली है जिससे भ्रूण-अवस्था मे ही पता चल जाएगा कि लडका हाने वाला है या लडकी। धन्य हैं ऐसे वैज्ञानिक जिन्होने हौवा की पीडा को समझा और उसका उद्धार किया। हम उतनी ही औरतें चाहिए जो घर की चक्की मे पिसती रहें। फालतू औरतों का दिमाग फालतू कामो मे लगकर वह हौवा से हौआ बनेंगी, पुरुष को भयभीत करेगी।

शब्दकोष के अनुसार हौवा शब्द स्त्रीलिंग है और वह सौन्दय तथा कोमलता से पूर्ण है। परन्तु हौवा जब पुल्लिग होती है तब वह हौआ बन

जाती है। हौआ डराने के काम आता है। जो बच्चे दूध नही पीते हैं अच्छे बच्चे नही बनते हैं, हौआ उन्हें डराता है। हौवा जब तक स्त्रीलिंग रही है, सौंदर्य और कोमलता की प्रतिमा बनी रहती है, पुरुष के चरणो की दासी रहती है, घर की रानी बनी रहती है, पुरुष निश्चित होकर अपनी मर्दानगी का सुख भोगता है। परन्तु जब हौवा जागती है, पुल्लिंग होती है, आदम से आगे बढने का स्वप्न देखती है, तब वह हौआ बन जाती है।

अब भी हौवा आदम बनने को होती है, पुरुष का सिंहासन डोलने लगता है।

आजकल राधेलाल जी का सिंहासन डोल रहा है। पिछले रविवार उनके घर गया तो दरवाजा खोलते ही किसी आतंकवादी की तरह उन्होने प्रश्न दाग दिया, "तुम तुम ही बताओ आजकल के जमाने मे पत्नी का क्या फर्ज है ?" मैं पंजाब-पुलिस-सा चकित हो था कि उन्होने स्वयं उत्तर दे डाला। "उसका यही फर्ज है न कि अपनी गृहस्थी ठीकठाक सभाले। घर के छोटे मोटे काम नाश्ता तैयार करना, खाना बनाना, बच्चो को स्कूल भेजना, झाड़ू पोछा करना, बर्तन साफ करना, थोडी-बहुत सिलाई करना और घर की देखभाल करना। अब यह काम गृहणी नही करेगी तो क्या गृहणा करेगा ? आदमी शादी क्यो करता है उसे सुख मिले इसलिए न ?"

मैं समझ गया कि उनके घरेलू हालात ठीक नही है। परन्तु एक अच्छे पड़ोसी की तरह उनके घरेलू मामलो म हस्तक्षेप न करते हुए अजान होकर मैंने पूछा, "पर हुआ क्या राधेलाल जी ?

"होना क्या है मैं दफ्तर से थक कर आया और इन महारानी जी से बोला कि कुछ चाय नाश्ता दे दो। तो जानते है महारानी जी ने क्या कहा ? बोली, मैं भी थकी हुई हू, आज चाय तुम पिला दो। शिव ! शिव ! शिव ! इतना घोर अनय घर का स्वामी चूल्हा चौका करे ? बाहर जाकर थोडा बहुत कमा क्या लाती है हम पर हुक्म चलाने लगी, अपने पति पर। पहले की औरतें कितना काम करती थी खुद चक्की से आटा पीसती थी, कुए से पानी लाती थी, बच्चो को पालती थी, गोबर से उपले थापती थी और आजकल, थोडा बहुत पढ लिख गयी कमाने लगी तो सारी

गृहस्थी भूल गयी– चाय बनाने को कहो तो सिर मे दद होने लगता है।"

राधेलालजी का रक्तचाप आतकवादियो की गतिविधियो-सा बढता जा रहा था और मैं पजाब सरकार सा विवश खडा था। राधेलाल जी की मूछ को नारी जाति ने ललकारा था, आज उन्होंने अपने तरकस के सारे तीर खोल लिए थे। वह सत्सग माला उठा लाए और कापते हाथों से उसे खोलते हुए जैसे किसी महामत्र का जाप करने लगे। ' जानते हैं इस किताब मे महापुरुषो ने क्या लिखा है नारी नक का द्वार है पति की आज्ञानुसार चलने का व्रत रखने वाली स्त्री कभी दुखी नही होती। पति की आज्ञापालन करना स्त्री का परम धम है। वह इतना ही कर ले तो स्वग जाती है और यह स्त्री यह तो नक का कीडा बनेगी।

मुझे उस दिन राधेलाल के रूप मे महान पुरुष के दशन हुए। हे राधेलाल तू महान है। तू नारी को आज्ञा देता है जिससे तेरी आज्ञा का पालन करके वह पतिव्रत धम का पालन कर सके। तू अपने कोमल हाथो से कुलटा नारी की देह को पीटता है, जलाता है जिससे उसे स्वग मिले। तूने ही नारी को बलिदान का माग दिखाया। तूने नारी को महान बनाने के लिए उसे बनवास दिया, सती बनाया शिला बनाया क्या क्या नहीं बनाया। तू त्याग के इस पथ पर खुद नही चला, इसे नारी के लिए त्याग तेरा त्याग महान है।

हे पुरुष जाति तू भी राधेलाल की तरह जाग। देख जमाना कितना बदल गया है। एक वो जमाना था कि पति नारी से कह दे कि तुझे अग्नि परीक्षा दनी है तो वह हँसते हँसते चिता पर चढ जाती थी और आजकल चाय का पानी चढाने को कहकर तो देखें।

हे आदम तू जाग और हौवा को हौआ मत बनने दे। ऐसी व्यवस्था बना कि हौवा हौआ की दुश्मन बनी रहे। तू दहेज के साप को पाल, नारी को ईश्वर-भक्ति की अफीम खिला और उसकी आखो पर पतिव्रत धम का चश्मा चढ़ा तथा खुद चैन की बसरी बजा।

□□

नाम प्रेम जनमेजय

जन्म 18 मार्च 1949, इलाहाबाद

शिक्षा एम ए एम लिट पी एच डी (हिंदी)

प्रकाशित रचनाएँ

व्यग्य

1 राजधानी मे गवार
2 वेशममेव जयते
3 पुलिस ! पुलिस !
4 मैं नही माखन खायो

आलोचना

1 प्रसाद के नाटको मे हास्य व्यग्य
2 व्यग्य का स्वरूप (प्रकाश्य)

बाल साहित्य

1 अगर ऐसा होता 2 शहद की चोरी
3 बल्लूराम

सम्प्रति

कॉलेज आफ वोकेशनल स्टडीज शेख सराय II नई दिल्ली के हिंदी विभाग विभाग मे प्राध्यापक ।

सपर्क
73 साक्षरा अपार्टमेंट्स ए-3 पश्चिम विहार नई दिल्ली–110063

ISBN 81–7056–063–2